अहिंसा, आगम और विज्ञान से आलोकित श्रेष्ठतम पत्रिका

भाव विज्ञान

BHAV VIGYAN

भगवान बाहुबली (गोम्मटेश)

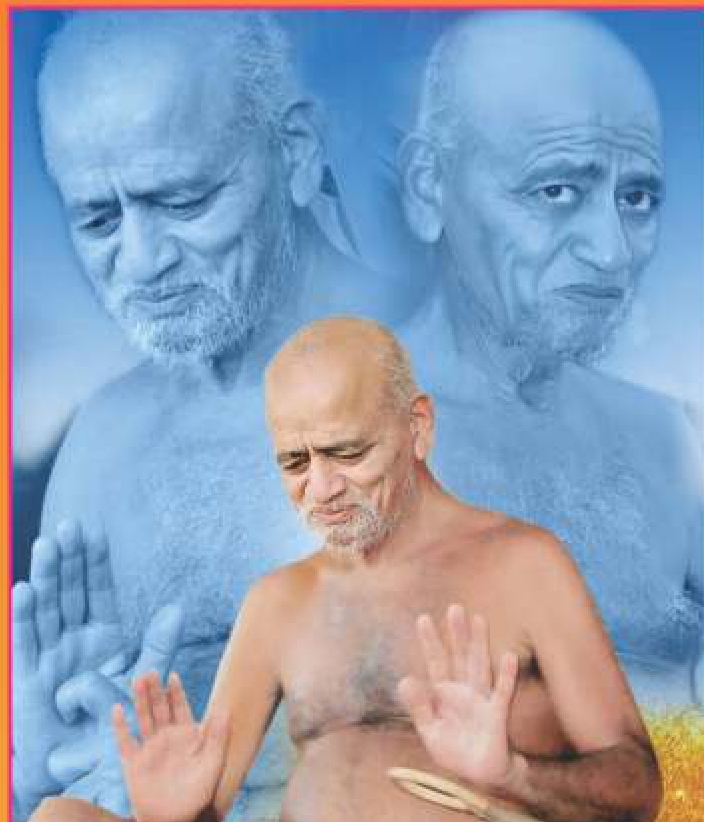

श्रीमद् आचार्य देव 108 विद्यासागर जी यतिराज

वीर निर्वाण संवत् - 2544
पौष शुक्ल, वि.सं. 2074, दिसम्बर 2017
अंक : बयालीस
वर्ष : दस

आचार्यश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज से पुरवा, जबलपुर में 8 अक्टूबर 2017 को मुनि दीक्षा प्राप्त करते हुए ऐलक भगवतसागरजी।

जैनेश्वरी दि.मुनि दीक्षा प्राप्त होने के उपरान्त नवीन पिच्छिका के सह नाम हुआ मुनि भास्वतसागर महाराज।

पुरवा चातुर्मास के अंत में सिद्धचक्र महामण्डल विधान हेतु गुरुवर से प्रारंभिक आशीष लेते हुए भक्तगण।

सिद्धचक्र महामण्डल विधान हेतु पाण्डाल में विराजमान हेतु श्रीजी को ले जाते हुए भक्तगण।

सिद्धचक्र महामण्डल विधान के सौधर्म इन्द्र आ.श्री का मंगल आशीष लेते हुए।

पाण्डिचेरी व किशनगढ़ से पधारे सुशील गंगवाल आदि गुरुवर का आशीर्वाद प्राप्त करते हुए।

आ.श्री 108 आर्जवसागरजी महाराज के दर्शन करते हुए संपादक, डॉ.अजित जैन व पत्रकार भानुकुमार जैन।

सिद्धचक्र महामण्डल विधान में श्रीजी का जिनाभिषेक व शांतिधारा करते हुए भक्तगण।

आशीर्वाद व प्रेरणा

संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज से दीक्षित

आचार्यश्री 108 आर्जवसागर जी महाराज ।

रजिस्ट्रेशन क्रं. MPHIN/2007/27127

त्रैमासिक

भाव विज्ञान

(BHAV VIGYAN)

वर्ष-दस

अंक - बयालीस

• परामर्शदाता •

पंडित मूलचंद लुहाड़िया

किशनगढ़ (राजस्थान) मोबा.: 9352088800

• सम्पादक •

डॉ. अजित कुमार जैन,

MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स,

कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003

फोन : 0755-4902433, 9425601161

bhav.vigyan@gmail.com

• प्रबंध सम्पादक •

डॉ. सुधीर जैन, प्राध्यापक

85, डी.के. काटेज, ई-8 एक्सटेंशन, अरेरा कालोनी,

भोपाल मो. 9425011357

• सम्पादक मंडल •

पं. जय कुमार 'निशांत', टीकमगढ़ (म.प्र.)

डॉ. संजय जैन (एडवोकेट), इंदौर (म.प्र.)

डॉ. श्रीमती अल्पना जैन (मोदी), ग्वालियर (म.प्र.)

इंजी. महेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)

श्री सुनील वेजीटेरियन, दमोह (म.प्र.)

• कविता संकलन •

पं. लालचंद जैन 'राकेश', भोपाल

• प्रकाशक •

श्रीमती सुषमा जैन धर्मपत्नी डॉ. अजित जैन

MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स, कोटरा

सुल्तानाबाद, भोपाल-462003

फोन : 0755-4902433, 9425601161

email : bhav.vigyan@yahoo.co.in

• आजीवन सदस्यता शुल्क •

पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक	:	24,500
परम संरक्षक	:	21,000
पुण्यार्जक संरक्षक	:	18,000
सम्मानीय संरक्षक	:	11,000
संरक्षक	:	5,100
विशेष सदस्य	:	3100
आजीवन (स्थायी) सदस्यता	:	1500

कृपया सदस्यता शुल्क प्रकाशक के एवं रचनाएँ प्रबंध सम्पादक के पते पर भेजें।

पल्लव दर्शिका

विषय वस्तु एवं लेखक		पृष्ठ
1. प्रवचन प्रमेय	- आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज	2
2. सत्पथ-दर्पण	- स्व.पं. अजित कुमार शास्त्री	13
3. कोटिशः अभिनंदन	- आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज	17
4. पारसचन्द से बने आर्जवसागर	- आर्यिकारत्न श्री प्रतिभामति माताजी	18
5. मन और इंद्रियों को वश में करना संयम है	- आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज	21
6. विवाह धर्म प्रभावना में सहायक	- आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज	21
7. मोह, राग और द्वेष आत्मा को किंकर्त्तव्यविमूढ़ बनता है	- आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज	22
8. वह लाजबाव है	- आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज	23
9. दृष्टान्त से सिद्धान्त की ओर	- आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज	24
10. जैन धर्म के संबंध में शुभ विचार	- डॉ. सुब्राय एम. भट्ट	25
11. विदेशों में जैन धर्म एवं समाज	- डॉ. त्रिलोकचन्द कोठारी	29
13. समाचार		37
14. प्रश्नोत्तरी		

लेखक एवं विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

भाव विज्ञान से संबंधित समस्त निर्णयों/न्यायों के लिए न्याय क्षेत्र भोपाल ही मान्य होगा।

ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॐ नमः सिद्धेभ्यः

प्रवचन प्रमेय

गतांक से आगे........ **-आचार्यश्री विद्यासागर जी महाराज**

सर्वार्थसिद्धि से उतरे थे। तीनों के साथ अनुगामी अवधिज्ञान आया था। तीन में वृषभनाथ तो दीक्षित हो गये, लेकिन इन दोनों को अवधिज्ञान की कुछ याद भी नहीं, फिर जातिस्मरण तो बहुत देर की बात रही। अपना धन, अपना ज्ञान, वर्तमान में हम कहां से आये हैं ? यह तक पता नहीं है। यह ज्ञान होना चाहिए कि अपने परिवार पर चक्र का कोई प्रभाव नहीं होता। लेकिन बुद्धि भ्रष्ट हो गई, धन के, मान-प्रतिष्ठा के पीछे। किन्तु बाहुबली का पुण्य बहुत जोरदार था, इसलिए उस चक्र ने परिक्रमा लगाई और रुक गया। इस प्रकार बाहुबली ने तीनों युद्धों में तो हरा ही दिया और चौथे में भी सबके सामने नीचा दिखा दिया।

इस सब रहस्य को देख, अविनश्वर आत्मा का ज्ञान उन सब बच्चों को हो गया। इसलिए बोले नहीं किसी के साथ। जब तक उम्र पूर्ण नहीं हो जाती, योग्यता नहीं आती तब तक के लिए मौन और बाद में दीक्षा ले ली। वृषभनाथ भगवान् ने ऐसा जब कहा तब कहीं चक्रवर्ती को ज्ञात हुआ कि यह भी सम्भव है। मैं तो यह सोचता हूं कि पिताजी सम्यग्दृष्टि और चक्रवर्ती भी थे तो कम से कम पिताजी के चरण छू लेना चाहिये थे, लेकिन नहीं। अभी वे बच्चे बहुत छोटे हैं, दूध के दांत भी नहीं टूटे, पर उन्होंने एक बात समझने योग्य कही- रागी के साथ हम बोलने वाले नहीं ! हम तो वैरागी-वीतरागी सन्तों के साथ बोलेंगे। यह बहुत अद्भुत परिणाम जातिस्मरण का है। इस कथा को सुनकर ऐसा लगने लग जाता है कि दूसरे को देखना बन्द कर केवल अपनी आत्मा की ओर लगना चाहिए। भीतर जो बात रहेगी वही तो फूटती हुई बाहर आयेगी।

एक बच्चा था। वह काफी बदमाश था। स्कूल नहीं जाता था, ऐसे ही घूम-फिरकर आ जाता था। एक दिन माता-पिता को पता चला कि यह दिन खराब करता रहता है अतः फेल हो जायेगा, तो मास्टर को कहा- इसे प्रतिदिन उपस्थित रखो और अच्छी शिक्षा दो। वह बालक होशियार भी था और बदमाश भी। एक दिन मास्टर ने पूछा-5 और 5 कितने होते हैं ? उसने कहा- 10 रोटी। 4-4 कितने होते हैं ? 8 रोटी। 3-3 कितने होते हैं ? 6 रोटी। साढ़े तीन-साढ़े तीन कितने ? सात रोटी। तब मास्टर ने सोचा यह रोटी क्यों बोल रहा है ? क्या खाना खाकर नहीं आया ? या मम्मी ने ही रोटी नहीं खिलाई ? मास्टर ने पूछा- क्या रोटी नहीं खाई ? उसने कहा जी, नहीं खाई। मम्मी ने कहा है, तब तक खाना नहीं जब तक स्कूल से पढ़कर नहीं आते। इससे ज्ञात होता है कि वह 8 तो बोल रहा है, किन्तु रोटी नहीं भूल रहा है। हम समयसार की कितनी ही गाथाएं याद कर लें, लेकिन हमारे भीतर जो अभिप्राय है वह याद आता जाता है। हमारे अभिप्राय के अनुसार ही कदम बढ़ते हैं, दृष्टि भले ही कहीं हो। बन्धुओ ! आप लोग "रिवर्स" में गाड़ी चलाते हैं, अब भले ही ड्राइवर सामने देख रहा हो, लेकिन सामने के दर्पण में जो पीछे का बिम्ब है उसे देखता है। देखने को तो लगता है कि दृष्टि सामने है परन्तु दृष्टि नियम से रिवर्स की ओर ही रहती है। इसी तरह हम दृष्टि भी इन विषयों से रिवर्स कर लें, कैसे हो, रिवर्स होना ही बड़ी बात है।

जब ऋषभनाथ के जीवन में घटना घटी तो उन्होंने अपनी दृष्टि को मोड़ लिया अपने-आप से समेट

लिया। सबको उन्होंने समाप्त नहीं किया, किन्तु अपने को समेट लिया। यह अद्‌भुत कार्य है। हम दुनिया को समेटकर कार्य करना चाहते हैं जो ''ण भूदो ण भविस्सदि''।

विहाय यः सागरवारिवाससं वधूमिवेमां वसुधावधूं सतीम्।
मुमुक्षुरिक्ष्वाकु-कुलादिरात्मवान् प्रभुः प्रवव्राज सहिष्णुरच्युतः ॥

भगवन्! आप अपने पद से च्युत नहीं हुए। ''ज्ञानी जीव अपने पद से च्युत नहीं होते यही उनका ज्ञानीपना है''। मात्र जानने वाले को ज्ञानी नहीं कहते। ज्ञानी का अर्थ अच्छा खोल दिया- जो राग नहीं करे, द्वेष नहीं करे, मोह नहीं करे, मद-मत्सर नहीं करे, समता का अभाव न हो। उन्हीं का नाम श्रमण और समता भी है। वे श्रमण बन चुके, इसलिए अपने पद को कभी छोड़ेंगे नहीं। ऐसे अच्युत और सहिष्णु हैं कि कितने भी उपसर्ग आ जाएं तो भी चलायमान नहीं होंगे। **मोक्षमार्ग परिषह और उपसर्गों के रास्तों से गुजरता है-**

''मार्गाच्यवननिर्जरार्थं परिषोढव्याः परीषहाः''

मार्ग अर्थात् संवर मार्ग से च्युति-स्खलन न हो, गिरावट न हो इसलिए उपसर्ग और परीषह सहन करने की आदत/अभ्यास करना चाहिए। अब यह नहीं चलेगा कि, उष्णता आ गई तो पंखा खोल लिया या कूलर चला दिया। यहाँ पर न कूलर ही होगा और न ही हीटर। यहाँ पर तो सभी वातानुकूल है और वातानुकूल भी। दोनों अनुकूल हैं। गर्मी पड़े तो निर्जरा, नहीं पड़े तो निर्जरा। उपसर्ग हो तो ज्यादा निर्जरा, नहीं हो तो भी निर्जरा। कोई प्रशंसा करे तो भी निर्जरा, निन्दा करे तो भी निर्जरा। कोई आवे तो निर्जरा, नहीं आवे तो भी निर्जरा। बड़ी अद्‌भुत बात हो गई। लोग आये तो अच्छा लगता है, नहीं आये तो अकेले कैसे बैठे? जो व्यक्ति भीड़ में रहने का आदी हो उसको यदि सीमा में बन्द कर दिया जाये तो उसकी स्थिति एकदम बिगड़ जायेगी। कहीं ''वेट'' कम हो जाएगा या कुछ और ही हो जाएगा। लेकिन जिसे सीमा में ही रहने की आदत हो गई है वह तो पहलवान होकर निकलेगा।

हमारे ऋषभनाथ का हाल भी इसी तरह का है कि उन्हें सीमा में बन्द करो या किसी अन्य में, उन्हें तो भीतर ''पीस'' है। आनन्द-सुख-शान्ति-चैन, सब कुछ अन्दर है। मैं अकेला हूँ तब बन्द करो या कुछ और मुझे चैन ही मिलेगी ऐसा सोचते हैं। बड़ी अद्‌भुत बात है, कहीं भी चले जायें, **कैसी भी अवस्था आ जाए, कैसा भी कर्म का उदय आ जाय, अब अनुकूल हो या प्रतिकूल। बल्कि विश्वास तो यह है कि अब नियम से कूल-किनारा मिलेगा। इसी को कहते हैं श्रामण्य। श्रमण को श्रमणता पाने के उपरान्त किसी भी प्रकार की कमी अनुभूत नहीं होना चहिए। वह मात्र ज्ञान से पूर्ति करता रहता है। समयसार के संवराधिकार में कहा है-**

जह कणयमग्गितवियं पि कणयसहावं ण तं परिच्चयदि।
तह कम्मोदयतविदो ण जहदि णाणी दु णाणित्तं॥

ज्ञानी अपने ज्ञानपने को नहीं छोड़ता, भले कितने कर्म के उदय कठोर से कठोरतम क्यों न आये। जिस प्रकार कनक को आप कैसे भी तपाते जाएँ, तपाते जाएँ, वह सोना और भी दमकता चला जाता है। वह अपने कनकत्व को, स्वर्णत्व को नहीं छोड़ता। जयसेनस्वामी ने तो इसकी व्याख्या करते हुए कहा है कि-

''पाण्डवादिवत्''। कौन पाण्डव ? जो पाण्डव वनवास में भेजे गये थे, वे क्या ? नहीं, नहीं। वे जो स्वयं अपनी तरफ से वनवास में आये थे, अर्थात् मुनि बनकर आये हैं और उनके शरीर पर तपे हुए लोहे की जंजीरें डाल दीं गईं, फिर भी शान्त हैं। ऐसे ''पाण्डवादिवत्''। रत्नत्रय में भी तप के बिना चमक नहीं आती, रत्नत्रय को तपाना आवश्यक है। उसी से मुक्ति मिलती है। तपाराधना से ही मुक्ति मिलती है। रत्नत्रय से नहीं। जैसे- तुम हलुवा बनाते हो तो, मिश्री हो, आटा हो और घी हो। उन्हें अनुपात में मिला देते हो। उसमें और कुछ भी मिलाना हो तो मिला देते हो। लेकिन अभी हलुवा नहीं बनेगा। कब तक नहीं बनेगा ? जब तक कि नीचे से अग्नि का उसे पाक नहीं मिलेगा। ज्यों ही अग्नि की तपन पैदा होगी त्यों ही तीनों चीजें मिलने लगेंगी और मुलायम हलुवा तैयार हो जाएगा। इसी तरह रत्नत्रय रूप में तीनों जब तक भिन्न-भिन्न रहेंगे और तप का सहारा नहीं लेंगे तो ध्यान रखिये ! कोटिपूर्व वर्ष तक भी चले जाए तब भी मुक्ति नहीं होगी।...... होगी तो तप से ही।

अभी एक बात पण्डित जी ने कही थी कि अन्तर्मुहूर्त्त में भरत चक्रवर्ती को केवलज्ञान पैदा हो गया। बात बिल्कुल ठीक है, परन्तु मुक्ति क्यों नहीं मिली अन्तर्मुहूर्त्त में उन्हें ? एक लाख वर्ष तक उन्हें तप करना पड़ा। जितनी तपस्या ऋषभनाथ ने की उतनी ही तपस्या भरतचक्रवर्ती ने की। अभी-अभी वाचना (खुरई में) चल रही थी, उसमें भंग आया था कि ''अन्तर्मुहूर्त में केवलज्ञान भले ही हो जाए परन्तु मुक्ति नहीं मिलती''। इसका अर्थ है कि केवलज्ञान अन्तिम स्टेज नहीं है, अन्तिम मंजिल नहीं है। वह तो एक प्रकार से बीच का स्टेशन है जिसके उपरान्त मंजिल है। **केवलज्ञान यदि उपाधि नहीं तो वह बीच में अवश्य मिलेगा। केवलज्ञान होने के उपरान्त भी तो मोक्षमार्ग पूर्ण नहीं होता। इसलिए मुक्ति देने की क्षमता केवलज्ञान में नहीं। जिसके द्वारा मुक्ति मिलती है उसे उपादेय मानिये। मात्र तपाराधना के द्वारा मुक्ति होती है। वह अन्तर्मुहूर्त्त में मंजिल तक पहुँचा देती है।** देखिये ! भरत रह गये, ऋषभनाथ भी रह गये, परन्तु बाहुबली केवलज्ञान को प्राप्तकर सर्वप्रथम मुक्ति के उद्घाटक बने। इस युग के आदि में पिताजी और भाई से पहले, आगे जाकर दरवाजा खोल कर बैठ गये। बाद में पिताजी आये और भरत भी।

एक मजे की बात तो यह रही कि ऋषभनाथ भगवान् को भी बाहुबली के सिद्ध स्वरूप का चिन्तन करना पड़ा। भरत को भी करना पड़ा। जिसका जैसा पुरुषार्थ होता है उसको वैसा ही फल मिलता है। इसलिए हमारा लक्ष्य मंजिल का है, स्टेशन का नहीं। जैसे दिल्ली जाने के लिए तो आगरा भी एक स्टेशन आयेगा जो मंजिल नहीं है, मंजिल के निकट अवश्य है पर उससे भी आगे जाना है दिल्ली अन्तिम स्टेशन एवं मंजिल के रूप में होगा। दिल्ली पहुँचते ही उतर जाइये और मस्त हो जाओ साथ ही यह देखते रहें कि पीछे क्या-क्या हो रहा है ? राजकुमार स्वामी जैसों के उदाहरण हमारे सामने हैं। वह बालावस्था में जब मात्र बारह वर्ष के थे, गोद में बैठने की क्षमता रखते थे। उस समय मात्र अन्तर्मुहूर्त में मुक्ति पा गये। वह भी केवलज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। हाँ ! अन्तर्मुहूर्त्त में सब कुछ काम हो जाता है। एक और बड़ी बात कही गयी है कि जिसने आज तक त्रस पर्याय प्राप्त नहीं की, जिसे वेद की वेदनाओं का अनुभव नहीं, अभी निगोद से निकलकर आ रहा है और आठ साल का होते ही मुनिवर के व्रत ले अन्तर्मुहूर्त्त में मुक्ति प्राप्त कर लेता है- ऐसा आगम का उल्लेख है। ऐसे उल्लेख अनन्त की संख्या में हैं, कोई भी अन्त वाला नहीं। अर्थात् ऐसे पुरुषार्थशील प्राणी अनन्त हो गये और होंगे। बस, अब हमारे

नम्बर की बात है। इसी की प्रतीक्षा में हम हैं। हमें भीतरी पुरुषार्थ जागृत करना है। भीतर कितनी ऊर्जा शक्ति है? इसका कोई भी मूल्यांकन हम इन छद्मस्थ आँखों से नहीं कर सकते। इसे प्रकट करने में भगवान् ऋषभनाथ लगे हुए हैं। वे सोच रहे हैं कि- कोई भी प्रतिकूल अथवा अनुकूल अवस्था आ जाये, मेरे लिये सभी कुछ समान है। उसका चिन्तन चल रहा है।

बाहर यह
जो कुछ दीख रहा है
''सो'' मैं नहीं हूँ
और व मेरा भी नहीं है
ये आँखें
मुझे देख नहीं सकती
मुझमें देखने की शक्ति है
उसी का मैं सृष्टा हूँ
सभी का मैं दृष्टा हूँ!!

बहुत सरल-सी पंक्तियां हैं, लेकिन इन पंक्तियों में बहुत सार है- यह जो कुछ भी ठाट-बाट दिख रहा है वह ''मैं नहीं हूँ'' और वह ''मेरा भी नहीं'' है। ऐसा हो जाए तो अपने को ऋषभनाथ बनने में देर न लगे। लेकिन बन नहीं पा रहा है। क्यों नहीं बना पा रहा है? भीतर से पूछो, भीतर की बात पूछो, क्यों नहीं हो पा रहा है। ऋषभनाथ कहते हैं- **तू तटस्थ होकर देख। देखना स्वभाव है, जानना स्वभाव है। लेकिन चलाकर नहीं, चलाकर देखना राग का प्रतीक है। जो हो रहा है उसे होते हुए देखिये-जानिये।**

एक व्यक्ति जिसको वैराग्य का अंकुर पैदा हुआ है। पर अतीत में बहुत कुछ घटनाएं उसके जीवन में घटी थीं। उन सबको गौण कर वह दीक्षित हो गया। दीक्षा लेने के उपरान्त एक दिन का उपवास रहा। अगले दिन चर्या को निकलने वाला था तो गुरुदेव ने कहा-चर्या के लिए जाना चाहते हो? जाओ ठीक है। पर ध्यान रखना! हाँ... हाँ... आपकी आज्ञा शिरोधार्य है आपकी जो आज्ञा। वह जो सेठ हैं, उन्हीं के यहाँ जाना है। उनका नाम भी बता दिया गया। पर!.... वहाँ महाराज? हाँ, मैं कह रहा हूँ। वहीं जाना है, अन्यत्र नहीं जाना। पसीना आने लगा नवदीक्षित साधु को, लेकिन महाराज की आज्ञा। अब क्या करें! वह चल दिया। एक-एक कदम उठाते-उठाते चला गया, उसके घर की ओर। वह सोच रहा है- जिसके लिए मैं जा रहा हूँ। वह सम्भव नहीं। अभी भी कुछ बदला भोगना होगा। यह बात उसके दिमाग में गहरे घर करती जा रही है। फिर भी वह उसके सामने तक पहुँच गया। उस सेठ ने दूर से ही मुनि महाराज को देखकर सोचा धन्य है हमारा भाग्य!.... नमोऽस्तु... नमोऽस्तु महाराज!- आवाज तो उसी सेठ की है, बात क्या है, क्या उसके स्थान पर कोई अन्य तो नहीं? दिखता तो वही है। उसी के आकार-प्रकार, रंग-ढंग जैसा है। जैसे-जैसे महाराज पास गये वैसे-वैसे वह सेठ और भी विनीत होकर गद्‌गद् हो गया। उसके हाथ कांपने लगे। सोच रहा है-विधि में कहीं चूक न हो जाये, गलती न हो जाये।

उधर सेठ नमोऽस्तु... नमोऽस्तु नमोऽस्तु बोल, तीन प्रदक्षिणा लगाता है। इधर महाराज सोचते हैं कि- यह सब नाटक तो नहीं हो रहा है। क्योंकि इसके जीवन में यह संभव नहीं। मैं तो गुरु-आज्ञा से यहाँ आया हूँ। अन्यत्र जाना नहीं है। झूठ बोल सकने की अब बात ही नहीं, विधि तो मिल गई और पड़गाहन (प्रतिग्रहण) भी हो गया। अब....। महाराज! मनशुद्धि, वचनशुद्धि और कायशुद्धि, आहार जल शुद्ध है। महाराज गृह-प्रवेश कीजिए, भोजनशाला में प्रवेश कीजिए- कांपते-कांपते सेठ ने कहा। मुनिराज सोच रहे हैं कि यह कैसा परिवर्तन हुआ, जीवन के आदि से लेकर अभी तक के इतिहास में 36 का आकड़ा था। लेकिन यहाँ तो 36 का उल्टा 63 हो गया, यह कैसे? अभी तक वह 36 का काम करता था, अब! यह 63 शलाका पुरुषों का ही चमत्कार है। उसने अपने को 63 शलाका पुरुषों के चरणों में जाकर के अर्थात् तीर्थंकर आदि के मार्ग पर चलने के लिए संकल्प कर लिंग (भेष) परिवर्तन कर लिया। और लिंग बदलते ही उसका जो बैर जन्मत: था, भव-भव से था वह टूट गया। किन्तु मुनिराज को अभी इस बात का ज्ञान नहीं था। वह सोच रहे थे कि- सम्भव है अभी भी वह बैर भाव मेरे साथ बदला ले ले। लेकिन नहीं! सेठ ने नवधा-भक्ति के साथ आहार कराया और आहार के बाद पैर पकड़कर फूट-फूटकर रोने लगा व कहा- मैंने गलती की, माफ करिये, माफ करिये। मैं भीतरी आत्मा की छवि को नहीं देख पाया था। भीतर ही भीतर ऐसा एक परिवर्तन अब हुआ। मैं बिल्कुल पर्याय बुद्धि अपनाता चला गया। आत्मा की ओर मेरी दृष्टि ही नहीं गई। अब मुनि महाराज कहते हैं कि- यह दृष्टि मेरी नहीं है भैय्या! मैं तो भगवान् के पास गया था। उनकी शरण में जाने की ही कृपा है कि मुझे इस प्रकार की दिव्य-दृष्टि मिली। माफी तो हम दोनों मिलकर वहीं पर मानेंगे। चलो! तुम भी चलो साथ उनके चरणों में। वहा पहुँचने पर महाराज बोलते हैं क्यों भैया! मुलाकात हो गई? मुलाकात क्या, अब यह मुलाकात कभी मिटने वाली नहीं है। कारण, बैर भाव जो चलता है वह केवल पर्याय-बुद्धि को लेकर चलता है, यह समझ में आ गया।

आप लोग तो रामायण की बात करते होंगे, लेकिन मैं तो रावणायण की बात करता हूँ। रावण, राम से भी दस कदम आगे काम करने वाला है। ये हलधर थे, तो वे तीर्थंकर बनेंगे। ऐसे तीर्थंकर होंगे कि सीतारानी का जीव स्वयं गणधर बनेगा। जितना विप्लव दोनों ने मिलकर किया था, उससे कहीं अधिक शान्ति धरती पर करके मोक्ष चले जाएंगे। लक्ष्मण का जीव भी तीर्थंकर बनेगा। रावण भी तीर्थंकर बनेगा। सीता का जीव बीच में पर्याय धारणकर गणधर परमेष्ठी बनेगा। रावण की "ब्राडकास्टिंग" करने गणधर बनकर बैठेगा। अब सोचिये। भव-भव का वह बैर कहाँ चला गया। संसारी प्राणी अतीत की ओर और अनागत की ओर नहीं देखता है इसके सामने तो एक वर्तमान पर्याय ही रह जाती है। प्रागभाव को भी देखा करो, प्रध्वंसाभाव को भी देखा करो और तद्भाव को भी देखा करो, तभी भव-भव का नाता टूट जाएगा। ऐसा भव प्रादुर्भूत हो जायेगा कि जिसका दर्शन करते ही अनन्तकालीन कषाय की श्रृंखला टूटकर छिन्न-भिन्न हो जायेगी। कितना सुन्दर दृश्य होगा, रावण के भविष्य का उस समय, जब रामायण अतीत का दृश्य हो जाएगा। एक बार चित्र देखा हुआ, यदि दुबारा देखते हैं तो रस नहीं आता। जो नहीं देखा उसके बारे में बहुत भावना उठती है।

आश्चर्य की बात यह है कि भव-भव में बैर पकड़ने वाले ये जीव एक स्थान पर ऐसे बैठकर सब लोगों को हित के मार्ग का दर्शन देकर आदर्श प्रस्तुत करके मोक्ष चले जायेंगे।

इस प्रकार की घटनायें (रावण-सीता-राम जैसी घटनायें) पुराणों में अनन्तों हो गईं, भविष्यत् काल में अनन्तानन्त होंगी। जब अतीत काल की विवक्षा को लेते हैं तो अनन्त की कोटि में कहते हैं और अनागत की अपेक्षा से अनन्त नहीं, बल्कि अनन्तानन्त कहा जाता है। राम-रावण-सीता जैसी धटनाओं में कभी आप भी राम हो सकते हैं, कभी रावण, और भी कुछ हो सकते हैं। नाम तो पुन: पुन: वही आते जाते हैं। कारण, शब्द संख्यात हैं और पदार्थ अनन्त। ''फलाचंद'' नाम के कई व्यक्ति हो सकते हैं। इसी सभा में 10-20 मिल सकते हैं। सागर सिटी में 50-100 मिल सकते हैं। उस समय यदि किसी की दानराशि, उसी नाम वाले से मांगे तो घोटाला हो जाएगा। अब क्या करें ? बोली किसने ली थी क्या पता ? इसलिये सागर में भी मुहल्ला एवं अपने पालक का भी नाम बताओ ? अर्थात् शब्द बहुत कमजोर है। शब्द के पास शक्ति नहीं और ना ही अनन्त है। इसलिए इन सब बातों को भूल जाओ। अभावों में प्रागभाव और प्रध्वंसाभाव क्या था यह ज्ञात हो गया।

महाराज सोचते हैं कि- वह बैर भाव अभी रह सकता है क्या ? नहीं ! लेकिन लिंग (भेष) न बदला तो संभव भी था। क्योंकि सजातीयता थी। लेकिन ज्यों ही मुनिलिंग धारण किया और मुद्रा लेकर चले, त्यों ही उस व्यक्ति के साथ जो बैर चल रहा था, जाता रहा। उसने सोचा- अब यह वह व्यक्ति नहीं, किन्तु इसका सम्बन्ध तो अब महावीर प्रभु से हो चुका। यह लिंग घर का नहीं है। इसलिए जिनलिंग देखने के उपरान्त समता आ जाती है। किसी व्यक्ति विशेष का लिंग नहीं है यह। किसी व्यक्ति विशेष की पूजा नहीं है जैनशासन में। किसी एक व्यक्ति का शासन नहीं चल सकता। किसी की धरोहर नहीं। यह तो अनादिकाल से चली आ रही परम्परा है और अनन्तानन्तकाल तक चलती रहेगी। मात्र नाम की पूजा नहीं, नाम के साथ गुणों का होना आवश्यक है। स्थापना निक्षेप में यही बात होती है- ''यह वही है'' इस प्रकार ऐक्य हो जाता है। अर्थात् यह वृषभनाथ ही हैं। इसमें और उसमें कोई फर्क नहीं। इस तरह का ''बुद्धया एक्यं स्थाप्य'' बुद्धि के द्वारा एकता का आरोपण करना, जैसा कि कल ही पण्डित जी कह रहे थे- ''यह प्रतिमा नहीं भगवान् हैं, ऐसी एकता होती है। तब कहीं वह बिम्ब सम्यग्दर्शन के लिए निमित्त बन सकता है, नहीं तो वह अभिमान का भी कारण है। इसीलिए किसी व्यक्ति को स्मरण में न लाकर उसे प्रागभाव की कोटि में ले जाइये। यदि प्रागभाव की कोटि में चला गया तो उसका क्षय हो चुका। इसीलिए अब उस व्यक्तित्व का भी सम्बन्ध नहीं। उस भाव और इस भाव के बीच में बहुत अन्तर हो गया है। वह तब राग के साथ सम्बंद्ध था, पर अब वीतरागता से सम्बंद्ध। ''जो व्यक्ति इस प्रकार के लिंग को देख करके, उनकी पूजा-अर्चा नहीं करता, उनके लिए आहारदान नहीं देता तो उसके लिए आचार्य कुन्दकुन्द अष्टपाहुड में कहते हैं-

सहजुप्पणं रूवं दट्ठुं जो मण्णए ण मच्छरिओ।
सो संजमपडिवण्णो, मिच्छाइट्ठी हवदि ऐसो॥

कितनी गजब की बात कही है आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने- सम्यग्दर्शन और मिथ्यादर्शन को एक दर्पण के सामने लाकर रख दिया है। ''फेस इज दा इन्डेक्स ऑफ दा हार्ट'' ह्रदय की अनुक्रमणिका मुख-मुद्रा है। ह्रदय में क्या बात है यह मुख के द्वारा समझ लेते हैं। आचार्य कुन्दकुन्द कहते हैं कि अभी भी तुम्हारी दृष्टि में बैर भाव

है। अभी भी वह सेठ है। पर्यायबुद्धि है तेरी। तेरी दृष्टि में वीतरागता नहीं आ रही है। वीतरागता किसी की, अथवा घर की नहीं होती, न इसे चुराया जा सकता है और न किसी की बपौती है। नग्नत्व ही उसका साधन है। भगवान् महावीर या वृषभनाथ भगवान् और भी जिसको पूजते हैं उनका लिंग है। कुन्दकुन्द भगवान् ने कहा- यथाजातरूप भगवान् महावीर और इस लिंग में कोई अन्तर नहीं है। इसको देखकर जो व्यक्ति मात्सर्यादिक भावों के साथ वन्दना आदि नहीं करता है वह मिथ्यादृष्टि है। यह ध्यान रखिये! यथाजातरूप होना चाहिए, क्योंकि वे ही जो छट्ठे-सातवें गुणस्थानवर्ती हैं वे ही आपके घर तक आहार के लिए आ सकते हैं, अन्य नहीं। जिसके हृदय में सम्यग्दर्शन है वह जिनेन्द्र भगवान् को देखते ही सब पर्यायों को भूल जाता है। यह मेरा बैरी था, मित्र था, पिताजी थे, मेरे भाई थे या और कोई अन्य सम्बन्धी, अब कोई सम्बन्ध नहीं, सब छूट गया। इस नग्नावस्था के साथ तो मात्र पूज्य-पूजक सम्बन्ध रह गया है। इसके उपरान्त भी यदि अतीत की ओर दृष्टि चली जाती है, रागद्वेष हो जाते हैं, परिचर्या में नहीं लगता है तो कुन्दकुन्दस्वामी ने उसे मिथ्यादृष्टि कहा। आगे दूसरी गाथा में कहते हैं-

अमराण वंदियाणं रूवं दट्ठूण सीलसहियाणं।
ये गारवं करंति य सम्मत्तविवज्जिया होंति॥

अमरों के द्वारा जो वन्दित है, उस पद को तथा शील सहित व्यक्ति को देखकर भी जो गर्व करता है, उसका तिरस्कार करता है तो वह सम्यग्दर्शन से कोशों दूर है। ऐसा नहीं है कि एक बार सम्यग्दर्शन मिल गया फिर पेटी में बन्द कर, अलीगढ़ का ताला लगाकर ट्रेजरी में बन्द कर दें। कहीं हिल न जाए। आचार्य कहते हैं कि- ऐसा नहीं है, अन्तर्मुहूर्त्त में ही कई बार उलट-पलट हो सकता है। भीतर के भीत माल ''पास'' हो सकता है। ताला ऊपर रह जाये और माल भीतर से ''सप्लाई'' हो जाये। भीतर परिणामों में उथल-पुथल होता रहता है। यह सब पुण्य और पाप की बात है। इसी अष्टपाहुड में आचार्य कुन्दकुन्द देव ने एक जगह लिखा- ''बाहुबली, सर्वप्रथम द्रव्यलिंगी की कोटि में हैं। बड़ी अद्‌भुत् बात है। सर्वार्थसिद्धि से तो आये हैं और मुनि भी बने, फिर भी द्रव्यलिंगी की कोटि में उनको रखा। यह मात्र दृष्टि की बात है। बात ऐसी है कि- वर्द्धमान चारित्रवाला छट्ठे-सातवें गुणस्थान में तो परिवर्तन कर सकता है, लेकिन जिसका वर्द्धमान चारित्र नहीं है वह व्यक्ति नीचे गिरकर छट्ठे से पांचवे में भी आ सकता है, चौथे में आ सकता है और क्षायिक सम्यग्दृष्टि नहीं है तो प्रथमगुणस्थान तक आ सकता है। ऐसे भी भंग आगम में बनाये गये हैं। उन्होंने कहा- एक व्यक्ति क्षायिक सम्यग्दर्शन के साथ मुनिपद को अपनाता है, सातवें गुणस्थान को छू लेता है और अन्तर्मुहूर्त्त में छट्ठे में आ जाता है। फिर चतुर्थ गुणस्थान में आकर आठवर्ष और कुछ अन्तर्मुहूर्त्त कम पूर्वकोटि वर्ष व्यतीत कर सकता है।

धवला पढ़िये! उसका अध्ययन करिये तब ज्ञान होगा। क्षायिक सम्यग्दृष्टि तो है पर असंयमी हो गया, अब कैसे आहार दान दें? परिचर्या कैसे करें? हो सकता है देने वाला पंचमगुणस्थानवर्ती हो और लेने वाले मुनि महाराज चौथे गुणस्थानवर्ती। यहां ध्यान रखिये मुनिलिंग की पूजा की जाती है। भीतर रत्नत्रय है या नहीं, यह आपकी आंखों का विषय नहीं। अब हम पूछते हैं कि क्षायिक सम्यग्दर्शन होते हुए भी उसे ऊपर क्यों नहीं उठाया। जबकि अभी भी दिगम्बरावस्था है। जब सम्यग्दर्शन है तो चारित्र भी सम्यक् होना चाहिए। छट्ठे -

सातवें गुणस्थान को छूना चाहिए। पर नहीं होता है। इसका कारण, भिन्न-भिन्न शक्तियों की सीमायें, लक्षणों और गुणों की सीमायें ही हैं। भिन्न-भिन्न प्रयोजनों के कारण भी आगे नहीं बढ़ पाता। उसकी विशुद्धि इतनी घट गई कि ऊपर से तो मुनिलिंग की चर्या का अनुपालन करता हुआ पूर्वकोटि वर्ष तक सम्यग्दृष्टि बना रह सकता है। ऐसा भी सम्भव है कि जो क्षायिक सम्यग्दृष्टि नहीं है वह लेते समय छट्ठे-सातवें गुणस्थान में था और अन्तमुहूर्त्त में ही मिथ्यात्व गुणस्थान में आ गया। अब क्या करें? क्या आप आहार देना बंद कर देंगे? उसे कपड़े पहनना चाहिये क्या? "अरे! यदि कपड़ा नहीं पहनता तो धोखाधड़ी कर रहा है" ऐसा कहना बिल्कुल गलत है। ऐसा नहीं कहना चाहिए। यहाँ धोखाधड़ी करने की बात ही नहीं। सम्यग्दर्शन कोई ऐसी वस्तु नहीं है कि बांध के रख लिया जाये। क्षायिक सम्यग्दर्शन होते हुए भी छट्ठे-सातवें गुणस्थान से नीचे उतरना पड़े। हाँ! यह तो अवश्य है कि चारित्र बांधा जा सकता है किन्तु भीतरी परिणामरूप चारित्र को नहीं बांधा जा सकता। इसका अर्थ यह हुआ कि कर्म की भी अपनी शक्ति है। उसकी शक्ति के सामने किसी का पुरुषार्थ कुछ नहीं कर सकता।

द्रव्यलिंग कहने से मिथ्यादृष्टि को ही नहीं लेना चाहिए। कारण, बाहुबली मिथ्यादृष्टि होने वाले नहीं। सर्वार्थसिद्धि से क्षायिक सम्यग्दर्शन के साथ आये थे। इसी प्रकार की कई बातें राम के जीवन में आती हैं। भूमिका के अनुसार जब-जब कर्मों का उदय आता है तब-तब उसकी चपेट से आत्मा के कैसे परिणाम होते हैं। उसे कहा है- **कोउ-कोउ समै आत्माने कर्म दावे छे, कोउ-कोउ समै आत्मा कर्मने दावे छे।** अर्थात् कभी-कभी आत्मा कर्मों को दबाता है और कभी-कभी कर्म, आत्मा को दबाते हैं। यह कस्समकस्सा चलता रहता है। अन्त में जीत आत्मा की ही होगी। यह चलना भी चाहिए। मानलो, मैदान में दो कुश्ती खेलने वाले आ गये। एक मिनिट में ही एक गिर गया (चित्त हो गया) तो लोग कहते हैं कि मजा नहीं आया। कुछ दांव-पेंच होना चाहिए था। जब सारा का सारा बदन लाल हो जाए, 2-3 बार गिर-उठकर एक बार चित्त करें तो- वाह.. वाह...! कमाल कर दिया, कहेंगे। क्योंकि हमें आनन्द तभी आता है। उसी प्रकार जब जाना ही है इस लोक से तो करामात कर दिखाने से नहीं चूकना चाहिए। कर्मों ने अनन्तकाल से इसको दबाये रखा, अब एक बार ऐसी सन्धि आयी है कर्मों को दबाने की। एक बार में ही न दबा दें बल्कि दबाते रहें-दबाते रहें, जब बिल्कुल लतफत हो जाये, कहे- मैं भाग जाऊँगा, चला जाऊँगा- ऐसा कर दो अपने आत्मा के बल से। जब सम्पूर्ण बल खुलकर सामने आयेगा तो सभी कर्म भागते फिरेंगे। तभी वीतरागता प्राप्त होगी।

वीतराग और अराग में क्या अन्तर है? यह जो पृष्ठ, कागज का है यह अरागी है और भी जितनी भी वस्तुएं देखने में आ रही हैं वे सभी अरागी हैं, जड़ हैं, किन्तु चेतना वाले जीव ही कुछ रागी और कुछ वीतराग होते हैं। जिसके पास राग था, उसका अभाव करने से वीतरागता आती है। हमें अरागी नहीं वीतरागी बनना है।

आप लोग भी तो वीतराग हैं लेकिन कैसे? "आत्मानं प्रति रागो यस्य न वर्तते इति वीतराग:" आत्मा के प्रति जिसका राग नहीं है वह भी वीतराग है और जिसकी आत्मा में राग नहीं वह भी वीतराग है। आपको आत्मा के प्रति राग न होते हुए भी आप सरागी माने जाते हैं क्योंकि भिन्न-भिन्न जो अन्य वस्तुएं हैं उन सबके प्रति

आपको राग है। **आप कहते तो हैं- यह भिन्न हैं, यह भिन्न हैं, लेकिन थोड़ी भी प्रतिकूल दशा आ जाये तो खेद-खिन्न हैं। यह पर है, यह पर है- फिर भी उसी में तत्पर हैं। यह सब नाटक क्या है?**

जब नये दीक्षित श्रमण ने महाराज के चरणों में नमन किया तो महाराज ने कहा- क्यों क्या बात है, निकल गया पूरा का पूरा कांटा? महाराज! आपने तो अच्छी सन्धि पकड़ी हृदय की बात जान ली। भैय्या! हम हृदय की बात जानते हैं बाद की बात नहीं। किसी और के पास नहीं पहुँचना था, क्योंकि सबके प्रति तुम्हारे क्षमा भाव हैं। जहाँ बैर नहीं वहां क्षमा भाव है। अब तुमने दीक्षा ले ली, लेकिन जिसके साथ तुम्हारा बैर-भाव था, वह निकला कि नहीं? भीतर रहना नहीं चाहिए। उसको तुम्हीं टटोलो, झाड़ू लगाओ। और कहां पर? वहीं पर जाकर। उसमें अवश्य ही परिवर्तन होना चाहिए। उस श्रावक के, इस लिंग (जिनलिंग) को देखने मात्र से निष्ठा पैदा हो गई कि इस प्रकार को बैर रखने वाले भी मेरे आंगन तक आ सकते हैं। मान का पूरा का पूरा हनन। जो राजा था, दूसरों पर सत्ता रखता था, सब कुछ करता था, वही आज यूँ हाथ पसारकर आया है। यह भीतर की अग्नि-परीक्षा है। ''जो दिया जाय वह लेना'' बहुत ही कठिन व्रत है। उसमें अपनी मांग नहीं होना, बहुत कठिन है।

एक बार, सागर में वाचना चल रही थी, तब आचार्य गुणभद्र का सन्दर्भ देते हुए कहा था कि-श्रावक का पद कभी बड़ा नहीं होता, मात्र दान के अलावा। जिस समय उसके सामने तीन लोक के नाथ भी हाथ करते हैं, उस समय श्रावक को अपूर्व आनन्द होता है और उसी आनन्द के साथ अपना हाथ यूँ करता है (दान देता है)। तब हमने कहा- बात तो बिल्कुल ठीक है, परन्तु हाथ कांपते किसके हैं? देने वालों के ही हाथ कांपते हैं, लेने वालों के नहीं। क्यों कांपते हैं? क्योंकि देने वाला दे तो रहा है परन्तु क्या पता, कैसा हो जाए इसीलिए कांपते हैं। लेकिन महाराज निर्भीकता के साथ लेते हैं।

बन्धुओ! राजा हो या महाराजा, जब तक राजकीय मान सम्मान है तब तक तीन लोक का नाथ नहीं बन सकता। चाहे कितनी भी कठिन तपस्या क्यों न कर लें। इसीलिए वृषभनाथ ने दीक्षा ली। इसका अर्थ यही है कि उनके पास भीतर बैठी हुई, क्रोध, मान, माया, लोभ भले ही अनन्तानुबन्धी न हो पर शेष सभी कषाय तो विद्यमान होगी। इनका जब तक क्षय होगा तब तक उदयावली से उदय में आकर इनका कार्य देखा जा सकता है। वर्धमानचारित्र वालों को भी हो सकता है। परन्तु वह संज्वलन रूप होगा। अत: उसको भी जीतने के लिए बार-बार प्रयास करना, और जो कर रहे हैं वे धन्य हैं। समयसारकलश में एक स्थान पर लिखा है-

बहती रहती कषाय नाली, शान्ति-सुधा भी झरती है,
भव पीड़ा भी, वहीं प्यारकर मुक्ति-रमा मन हरती है।
तीन लोक भी आलोकित है अतिशय चिन्मय लीला है,
अद्‌भुत से अद्‌भुततम महिमा आतम की जय शीला है॥

वहीं पर कषाय नाली है, वहीं अमृत का झरना। वहीं तीन लोक, वहीं मुक्तिरमा। वहीं पर तीनों को आलोकित करने वाला अद्‌भुत-दिव्य-ज्ञान, लेकिन यह अतिशय लीला चेतना की ही है। धन्य हैं वे मुनिराज और उनकी चेतना, जो दीक्षा लेने के उपरान्त कषाय रहते हुए भी कषाय नहीं करते हैं। कषाय चले जाने के बाद हमने कषाय जीत ली, ऐसा नहीं। जैसे- रणांगन में शत्रु के सामने कूदना ही कार्यकारी है। जब बैरी भाग जाए,

उस समय कूदे तो क्या मतलब। शत्रु के सामने हाथ में तलवार हो और ढाल तथा छाती यूं करके रणांगन में कूद कर किये गये प्रहार से बच, सन्धि पा अपनी तलवार चलाने से काम होता है। **उसी प्रकार ज्ञान और वैराग्य रूपी ढाल को अपने हाथ में लेकर, ज्ञान की तलवार चलाने से अनन्तकालीन कर्म की फौज जो कि भीतर बैठी है, छिन्न-भिन्न हो जाती है।** बस अन्तर्मुहूर्त्त का समय लगता है। हमें जितना भी पुरुषार्थ करना है वह मात्र मोह को जीतने के लिए ही करना है। मोह को जीतने पर ही विजय मानी जायेगी अन्यथा कोई मतलब नहीं। कुछ भी सिद्ध होने वाला नहीं।

उस श्रावक को भी ऐसा ज्ञान हो गया, कि भगवन्! इनके साथ जो बैर था, जो गांठ पड़ गई थी वह कभी खुलेगी, यह संभव नहीं लगता था। कम से कम इस भव में तो कतई संभव नहीं लगता था। उस पर्याय का प्रध्वंसाभाव हो गया जिससे कि हमारी गांठ बंधी थी। अब मुनिलिंग आ गया, मुनिलिंग प्राप्त होते ही मेरे भीतर किसी भी प्रकार का राग-द्वेष भाव नहीं आये। कारण कि वे वीतराग होकर आये थे, रागी-द्वेषी होकर नहीं। यदि हमारे सामने कोई वीतरागता के साथ आते हैं तो हमें भी वीतराग भाव की उपलब्धि होगी और यदि मान दिखाते हैं तो हमारे भीतर भी मान की उदीरणा हो जाती है। सामने वाला व्यक्ति मान नहीं दिखाता तो हमारा भी मान उपशान्त हो जाए। जैसे-सिंह देखता है कि सामने वाला व्यक्ति मेरी ओर किस दृष्टि से देख रहा है, यदि लाल कटाक्षों से देखता है तो सिंह भी इसी प्रकार से कर लेता है। यदि वह शान्तरूप से चलता है तो सिंह भी शान्त मुद्रा से चला जाता है।

एक बार की बात। दो सन्त जंगल से चले जा रहे हैं, उधर से एक सिंह भी आ गया। सिंह को देखकर दोनों को थोड़ा-सा क्षोभ हो गया। अब क्या होगा, क्या पता? आजू-बाजू खिसकने के लिए कोई स्थान नहीं था। अब क्या करें? अब तो वह जैसा आ रहा है, वैसे ही हम चलें। रुकने से क्या मतलब? जो करना हो कर लेगा। इसलिए चलने में कोई बाधा नहीं। बस, उस तरफ नहीं देखना है। ईर्यापथ से चलना है। नीचे देखते हुए दोनों चले गये। बीच में से वह भी क्रास कर चला गया। सिंह इधर चला गया और वे उधर। कुछ दूर जाकर इन लोगों ने मुड़कर देखा तो उसने भी देखा कि कही कोई प्रहार तो नहीं। दोनों शान्त चले गये और सिंह भी चला गया।

बन्धुओ! कषाय-भाव की दूसरों को देखकर भी उदीरणा होती है। इसलिए बहुत सम्हाल कर चलने की बात है। कषायवान् के सामने जाने से कषाय की उदीरणा बहुत जल्दी हो जाया करती है। जिस प्रकार अग्नि को ईंधन के द्वारा बल मिल जाता है। उसी प्रकार कषायवान् व्यक्ति के सामने कोई कषाय करता है तो उसको बहुत जल्दी कषाय आती है।

एक छोटा-सा लड़का माँ की गोद में बैठा है। माँ दूध पिलाती-पिलाती आंखे लाल कर ले तो वह दूध पीना छोड़कर देखने लग जाता है, कि क्या मामला है? गड़बड़-सा लगता है, तो मुंह का भी दूध वहीं छोड़ देगा। ज्यादा विशेष हो गया तो वह वहाँ से खिसकने लगेगा। लेकिन ज्यों ही चुटकी बजाकर प्यार दिखाया तो फिर पीने लगेगा। इसका मतलब यही हुआ कि दूसरों की कषाय समाप्त करना चाहते हो तो हमें भी उपशान्त होते चले जाना चाहिए।

अतृणे पतिता वह्निः स्वयमेवोपशाम्यति

जहाँ पर तृण नहीं। घास-पूस नहीं है। वहाँ पर धधकती एक अग्नि की लकड़ी भी रख दो तो वह भी पांच मिनिट में समाप्त हो जाती है। ईंधन का अभाव होते ही शान्त हो जाएगी। इसी तरह हमारे पास कषाय है वह शान्त होते ही अपने आप शान्ति आ जाएगी। जब तक ईंधन का सहयोग मिलेगा ईंधन पटकते रहेंगे वह बढ़ती जायेगी। **उपशम भाव ही हमारे लिए अजेय और अमोघ अस्त्र हैं। इस अमोध अस्त्र के द्वारा दुनिया को नहीं, अपनी आत्मा को जीतकर चलना है।**

जैसे आदिनाथ ने आज दीक्षा अंगीकार कर ली। ऐसे श्रमणत्व को मैं बार-बार नमस्कार करता हूँ। ऐसा श्रमणत्व हम लोगों को भी मिले ऐसी भावना करना चाहिए। अतीत में कितनी भी कषाय हो गई हो। उसकी याद नहीं करना चाहिए। अनागत की "प्लानिंग" भी नहीं करना चाहिए। यह सब पर्याय बुद्धि है। आप तो प्रागभाव और प्रध्वंसभाव को घटाकर देख लीजिए सारा का सारा माहौल शान्त हो जायेगा।

एक वीरत्व की बात याद आ गई, वह और आपके सामने रख देता हूँ ताकि आप भी उसका उपयोग कर सकें-

कौन कहता है कि आसमां में सुराख नहीं हो सकता।
एक पत्थर तो दिल से उछाल कर देखो यारो॥

याद रखिये! आत्मा के पास अनन्तशक्ति है। इस शक्ति का उपयोग कषायों के प्रहार करने के लिए कीजिए। हमारी यह शक्ति अब दबी नहीं रहना चाहिए, सोई नहीं रहना चाहिए, नहीं तो चोरों का साम्राज्य हो जायेगा। क्या आप अपनी सम्पदा को चोरों के हाथ में देना चाहेंगे? नहीं ना। इसलिए दहाड़ मारकर उठो। जैसे सिंह के सामने कोई नहीं आता। वैसे ही उठो। सिंह वृत्ति को अपनाओ। **चूहों से बनकर हजार वर्ष जीने की अपेक्षा सिंह जैसा बनकर एक दिन जीना श्रेष्ठ है।** मुनि महाराजों की वृत्ति ही सिंह-वृत्ति कहलाती है। वह सिंह जैसे क्रूर तो नहीं होते किन्तु सिंह जैसे निर्भीक जरूर होते हैं, निरीह होते हैं। पीठ-पीछे से धावा नहीं बोलते। छुपकर जीवन-यापन नहीं करते। उनका जीवन खुल्लमखुल्ला रहता है। वनराजों के पास जाकर महाराज रहते हैं। भवनों में रहने वाले वनराजों के पास नहीं ठहर सकते।

आज भगवान् ने दीक्षा ली तो इन्द्र चाकर बनना चाहता था लेकिन उन्होंने स्वीकार नहीं किया। उसे कह दिया- तुम पालकी भी नहीं उठा सकते हो। पहले मनुष्य उठा ले, फिर कोई नहीं। ना ये, ना तुम। **मैं मात्र अकेला हूँ, था और रहूँगा। इस एकत्व के माध्यम से आज तक हजारों आत्माएं अपना कल्याण कर गईं, कर रहीं हैं, और आगामी काल में भी करेंगी। अपूर्णता से अपने जीवन को पूर्णता की ओर ले जायेंगी।** मैं उन वृषभनाथ भगवान को, जो आज मुनि बने हैं, यह पंक्ति बोलते हुए स्मरण में लाता हूँ-

बल में बालक हूँ किस लायक, बोध कहाँ मुझमें स्वामी।
तव गुण-गण की स्तुति करने से, पूर्ण बनूं तुम-सा नामी॥
गिरि से गिरती सरिता पहले पतली-सी ही चलती है।
किन्तु अन्त में रूप बदलती सागर में जा ढलती है॥

"अहिंसा परमो धर्म की जय" (केसली 9-3-86 सन्ध्या, अभियोगगमन बेला)

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

शान्तिर्जिनो मे भगवान् शरण्यः ।

सत्पथ-दर्पण

गतांक से आगे.....

स्व. पं. अजित कुमार शास्त्री (पूर्व जैनगजट संपादक)

निमित्त कारण

श्री कहान भाई अपनी पुस्तक 'वस्तु विज्ञानसार' के पृष्ठ 33 पर लिखते हैं-

'परमार्थ से निमित्त के बिना ही कार्य होता है। विकार रूप या शुद्ध रूप में जीव स्वयं ही निज पर्याय में परिणमित होता है और उस परिणमन में निमित्त की जो नास्ति है। कर्म और आत्मा का सम्मिलित परिणमन होकर विकार नहीं होता। एक वस्तु के परिणमन के समय पर-वस्तु की उपस्थिति हो तो इसमें क्या ? परवस्तु का और निजवस्तु का परिणमन बिल्कुल भिन्न ही है, इसलिए जीव की पर्याय निमित्त के बिना अपने आप से ही होती है।

श्री कहान भाई जी द्वारा प्रचलित यह ''बिना निमित्त कारण के कार्य होने'' का सिद्धान्त कर्म-सिद्धान्त, सम्यक्त्व, ज्ञान, चारित्र आदि के प्रतिपादक चारों अनुयोग रूप समस्त आगमों के तथा समस्त विज्ञान (साइन्स) के समस्त तर्कशास्त्र एवं समस्त दर्शन-सम्मत कार्यकारण भाव के प्रतिकूल है।

'यस्मिन सति यद् भवति, असति च न भवति, तत्तस्य कारणम्'

अर्थ- जिसके होने पर जो कार्य हो, जिसके न होने पर वह कार्य न हो, वह उस कार्य का कारण होता है।

यह कार्य- कारण भाव का सर्वसम्मत लक्षण है। कारण दो प्रकार के होते हैं- 1. 'उपादान कारण' जो कि स्वयं कार्यरूप परिणत होता है। 2. 'निमित्त कारण' जो उस कार्य के होने में सहायता करता है। उपादान कारण एक होता है परन्तु निमित्त कारण अनेक हुआ करते हैं। जिस तरह उपादान कारण के बिना कोई भी कार्य नहीं होता, इसी तरह निमित्त कारणों के बिना भी कोई कार्य नहीं होता।

जैसे रुई से कपड़ा बनता है, तो रुई कपड़े का उपादान कारण है, बिना रुई के कभी सूती कपड़ा बन नहीं सकता। परन्तु अकेली रुई से भी कपड़ा नहीं बन सकता रुई को धागों के रूप में लाने के लिए चर्खा और चर्खा चलाने वाली स्त्री या पुरुष होना चाहिये बिना चर्खा या मशीन तथा उसके चलाने वाले व्यक्ति के धागा अपने आप नहीं बन सकता। धागा बन जाने पर कपड़ा बनाने के लिए उसको बुनने का करघा तथा करघा चलाने वाला जुलाहा होना चाहिये, बिना करघा और बुनकर और जुलाहे के उस धागे से कपड़ा नहीं बन सकता हैं इस तरह रुई से कपड़ा बनाने के लिए चरखा, करघा, कातने वाले, बुनने वाले आदि अनेक कारण होने अत्यन्त आवश्यक हैं उन निमित्त कारणों के बिना रुई से कपड़ा त्रिकाल में नहीं बन सकता।

इस विषय में श्री कहान पंथ का यह मत है कि ''कार्य केवल उपादान कारण से होता है, निमित्त कारण कुछ नहीं करता।'' उनका यह मानना और कहना सर्वथा गलत है क्योंकि न तो कोई नैतिक कार्य बिना निमित्त

कारणों की सहायता के होता है या हो सकता है और न कोई आध्यात्मिक कार्य- कर्म-बंधन या कर्म-मोचन (कर्मों से मुक्ति) बिना निमित्त कारणों की सहायता के होता है या हो सकता है।

"सामग्री जनिका, नैकं कारणं।" यानी-उपादान और निमित्त कारणों से समुदाय से ही कार्य होता है, केवल अकेले उपादान कारण से कार्य नहीं होता।

जिनवाणी, जिनवाणी के उपदेष्टा गुरु, मन्दिर, प्रतिमा, स्वस्थ शरीर, स्वस्थ मन, मिथ्यात्व-अज्ञान-असंयम का हटना, मनुष्य भव, वज्र-वृषभ नाराच संहनन, व्यवहार सम्यक्त्व, व्यवहार ज्ञान, व्यवहार चारित्र, धर्म-ध्यान आदि 10-5 ही नहीं किन्तु असंख्य अन्तरंग, बहिरंग निमित्त कारणों के मिलने पर ही मुक्ति मिला करती है। उनमें से किसी भी निमित्त कारण की कमी होने पर त्रिकाल में भी मुक्ति नहीं मिल सकती। अब तक जो अनन्तानन्त जीव संसारी बने हुए हैं तथा अनन्तानन्त अभव्य, दूरातिदूर भव्य प्राणी अनन्त काल तक संसारी बने रहेंगे, उस सब संसार-भ्रमण में या मुक्ति न मिलने में ऊपर लिखे निमित्त कारणों का न मिलना ही मुख्य बाधक है।

समयसार ग्रन्थ में आत्मा के मिथ्यात्व, अज्ञान, असंयम, जीवन, मरण आदि परिणमन के मोहनीय, ज्ञानावरण, आयु कर्म आदि द्रव्यकर्म निमित्त कारण बतलाये हैं। नियमसार में सम्यक्त्व के उत्पन्न होने के लिये दर्शनमोहनीय का क्षय, जिनवाणी आदि निमित्त कारण बतलाये हैं।

प्रत्येक संसारी आत्मा पौद्गलिक शरीर तथा उसकी इन्द्रियों के निमित्त से चलता फिरता, देखता, सुनता, सूँघता, रस आस्वाद करता, लिखता, पढ़ता, बोलता है। प्रत्येक द्रव्य का परिणमन काल द्रव्य के निमित्त से होता है। धर्मद्रव्य का निमित्त न मिलने से मुक्त आत्मा आलोकाकाश में नहीं जाने पाता।

राजवार्तिक श्लोकवार्तिक, प्रमेयकमलमार्तण्ड, अष्टसहस्री आदि ग्रन्थों में निमित्त कारणों की सार्थकता का समर्थन प्रचुर मिलता है। उसे विस्तार भय से यहाँ नहीं दे रहे।

स्वपर-प्रत्यय पर्याय उपादान तथा निमित्त कारणों द्वारा सम्पन्न होती है। द्रव्यों का परिणमन काल द्रव्य की नैमित्तक सहायता से होता है, ऐसा विधान श्री कुन्दकुन्द आचार्य ने पंचास्तिकाय की 'कालो परिणाम भवो' आदि 100 वीं गाथा में, श्री अमृतचन्द्र सूरि ने इसकी टीका में (जीवपुद्गलानां, परिणामस्तु बहिरंगनिमित्त-भूत-द्रव्यकाल-सद्भावे सति संभूतत्त्वात्) किया है। श्री पूज्यपाद आचार्य ने सर्वार्थसिद्धि अ. 5 सूत्र 22 में समस्त शुद्ध अशुद्ध द्रव्यों के परिणमन में (धर्मादीनां द्रव्याणां स्वपर्यायनिर्वृत्तिं प्रति स्वात्मनैव वर्तमानानां बाह्योपग्रहाद्विना तद्वृत्यभावात् तत्प्रवर्तनोपलक्षित: काल:) काल द्रव्य को अनिवार्य निमित्त कारण बतलाया है।

व्यवहार चारित्र

व्यवहार चारित्र को त्याज्य मानकर मुक्ति प्राप्त करना तो, ऐसा है जैसे बिना बीज बोये वृक्ष उत्पन्न होना, बिना बचपन के यौवन अवस्था आने का स्वप्न देखना। आज तक कोई भी मुक्तिगामी ऐसा नहीं हुआ जो व्यवहार चारित्र के बिना आचरण किये निश्चय चारित्र-धारी बना हो और मुक्ति को प्राप्ति कर सका हो। मुक्ति-मार्ग का प्रारम्भ, सराग-सम्यक्त्व, सराग-चारित्र यानी-व्यवहार-सम्यक्त्व, व्यवहार-चारित्र से ही

हुआ करता है।

इस कारण कहानपंथ का यह सिद्धान्त मूलत: गलत है कि "व्यवहार चारित्र त्याज्य है"।

आज व्यवहार चारित्र के अभाव में मनुष्यों का पतन हो रहा है, वह अपने दुराचार से चोर, अभक्ष्य-भक्षक, व्यभिचारी, शराबी, बेईमान, लुच्चा, गुण्डा, बदमाश बनते जा रहे हैं। जिस तरह पुराने युग में (भूत-काल में) व्यवहार चारित्र ने मनुष्य को सद्गुणी, स्व-परहितकारी, धर्मात्मा, सज्जन बनाया, वैसे ही आज भी और अनन्त भविष्य काल तक भी व्यवहार-चारित्र ही मनुष्य का उद्धार करेगा।

व्यवहार चारित्र के बिना शुद्ध आत्मा की बात करना घुने हुए चने के समान 'थोथा चना बाजे घना' लोकोक्ति के अनुसार नि:सार, निरर्थक है।

व्यवहार नय

संसारी जीव का प्रत्येक कार्य, वह चाहे लौकिक हो या मौक्षिक; व्यवहारनय को सत्य मानकर ही करना पड़ता है।

श्री कहान भाई का प्रवचन, लिखना, पढ़ना, देवदर्शन, भक्ति, उपासना, खाना, पीना, सोना, बोलना, सुनना, चलना, फिरना सभी कुछ प्रवृत्ति व्यवहार नय-अनुसार है। श्री कहान भाई स्वयं मनुष्य, पंचेन्द्रिय, संज्ञी, पर्याप्त, जैन आदि व्यवहारनय-अनुसार हैं। यदि व्यवहारनय असत्यार्थ है। व्यवहारनय को असत्यार्थ कहने वाला व्यक्ति जरा निश्चयनय से बोलकर, देखकर, सुनकर तो बतलावे।

'मेरी माता बन्ध्यता है, मैं गूंगा हूँ' कहने वाले मनुष्य के समान ही व्यवहारनय को सर्वथा असत्यार्थ कहने वाला मनुष्य है।

जगत के प्रत्येक द्रव्य का प्रत्येक अंश, वह चाहे शुद्ध हो या अशुद्ध, उत्पाद व्ययात्मक पर्याय रूप हैं। पदार्थ का यह पर्याय है परिणमन व्यवहार नय अनुसार तो है ही। निश्चय नय से तो आत्मा न मुक्त है, न संसारी है, न सर्वज्ञ है, न अल्पज्ञ है, न शुद्ध है, न अशुद्ध है, न मूर्ख है, न विद्वान, न मनुष्य है, न देव।

जो भी विकल्पात्मक कथन है वह सब व्यवहारनय अनुसार है। निश्चयनय तो गूंगा है। वह कुछ बोल नहीं सकता। समयसार ग्रन्थ भी व्यवहारनय से निश्चय को बतलाता है। निश्चयनय से श्री कहान भाई बाल तो दिखावें, शुद्ध आत्मा का कथन तो योजनों और राजुओं दूर की बात रही।

स्वयं केवलज्ञानी व्यवहारनय के अवलम्बन से उपदेश देते हैं, समस्त जिनवाणी निश्चय व्यवहार नय का सन्मान करती है।

जयधवल में लिखा है-

"ववहारमय पडुच्च पुण गोदमसामिणा चदुवीसण्हमणियो-गद्दाराणमादीए मंगलं कदं। ण च ववहारणओ चप्पलओ, ततो ववहाराणुसारि सिस्सण पउत्तिदंसणादो। जो बहुजीवाणुग्ग-हकारी ववहारणओ सो चेव समस्सिदव्वो ति मणेणावहारिय गोदमथेरेण मंगलं तत्थ कयं।" (पु.1 पृ.8)

अर्थ- गौतम स्वामी ने व्यवहार नय का आश्रय लेकर कृति आदि चौबीस अनुयोगद्वारों के आदि में 'णमो जिणाणं' इत्यादि रूप से मंगल किया है। यदि कहा जाय व्यवहार नय असत्य है, सो भी ठीक नहीं है

क्योंकि उसमें व्यवहार का अनुसरण करने वाले शिष्यों की प्रवृत्ति देखी जाती है। अत: व्यवहार नय बहुत जीवों का अनुग्रह करने वाला है, उसी का आश्रय करना चाहिए, ऐसा मन में निश्चय करके गौतम स्वामी ने चौबीस अनुयोगद्वार के आदि में मंगल किया है।

णियणियवणिज्जसच्चा सव्वणया पर वियालणो मोहा।
ते उण ण दिट्ठसमाओ विभयइ सच्चे व अलियं वा॥ 119॥

अर्थ- सभी न अपने अपने विषय के कथन करने में समीचीन हैं और दूसरे नयों का निराकरण करने में मूढ़ हैं। अनेकान्त रूप समय के ज्ञाता पुरुष यह नय सच्चा है और यह नय झूठा है, इस प्रकार का विभाव नहीं करते हैं।

तब व्यवहार नय को सर्वथा असत्यार्थ कहना ऐसे ही है, जैसे कोई बतलाता फिरे कि 'मेरे मौनव्रत है।'

निश्चय से केवली भगवान आत्मज्ञ हैं उपचरित असदूभूत व्यवहारनय से सर्वज्ञ हैं। (नियमसार गा.185) यदि व्यवहारनय या व्यवहारनय का विषय झूठ है तो सर्वज्ञ के अभाव का प्रसंग आ जायेगा जो कि कहानपंथ वालों को इष्ट नहीं है।

अत: कहानपंथ सिद्धांत की बात गलत है, कि व्यवहारनय सर्वथा असत्यार्थ है। व्यवहार (पर्यायर्थिक) नय भी निश्चयनय के समान सोलह आने (शत् प्रतिशत) सत्य है।

केवलज्ञान

कहानपंथ की मान्यता है कि 'केवलज्ञान हो जाने पर केवलज्ञानावरण का क्षय होता है।' कहानपंथ सिद्धान्त की यह मान्यता भी युक्ति और आगम के विरुद्ध है।

संसार का कोई भी कार्य तब होता है जब उस कार्य के प्रतिबन्धक कारण का अभाव होता है। सूर्य का प्रकाश तब होता है, जब उसके प्रकाश की प्रतिबन्धक काली आंधी, भारी बादल पटल, पूर्ण सूर्य ग्रहण आदि प्रतिबन्धक न हो। यदि काली आंधी होती है, तब दिन के दोपहर को भी अन्धकार फैला रहता है, जब काली आंधी हट जाती है, तभी सूर्य का प्रकाश होता है।

कोई बन्दी (कैदी) तभी स्वतन्त्र होता है, जब कि उसकी हथकड़ी बेड़ी और जेल दूर हो जावे। बिना हथकड़ी, बेड़ी कटे और बिना जेल से मुक्ति मिले कोई भी कैदी जेल से मुक्त नहीं हो सकता।

ऐसी ही बात संसार-बन्दीघर (जेलखाने) के बन्दियों (कैदियों) संसारी भवों की भी है। कर्म की हथकड़ी-बेड़ी ने संसारी जीव आत्मा को और उसके प्रत्येक गुण को जकड़ रखा है। केवलज्ञान को केवलज्ञानावरण ने, सम्यक्त्व को दर्शन-मोहनीय ने तथा चारित्र को चारित्र-मोहनीय कर्म ने प्रतिबद्ध कर (रोक) रखा है, जब तक वह कर्म का प्रतिबन्ध दूर नहीं होता तब तक सम्यक्त्व, केवल-ज्ञान और यथाख्यात-चारित्र का उदय न होता है और न हो सकता है।

जैसे सम्यक्त्व की उत्पत्ति होने से दर्शन-मोहनीय का क्षय नहीं होता किन्तु अध:करण, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण रूप परिणामों के द्वारा दर्शन-मोहनीय कर्म की निर्जरा और संवर होने के पश्चात् सम्यक्त्व होता है। जैसा कि श्री कुन्दकुन्द आचार्य ने नियमसार की गाथा 53 में सम्यक्त्व के लिए अन्तरंग निमित्त-कारण के रूप में 'अंतर हेदु भणिया, दंसण मोहस्स खय-पहुदी' (दर्शन-मोहनीय कर्म का क्षय आदि सम्यक्त्व के अंतरंग निमित्त-कारण हैं) वाक्य द्वारा दर्शन-मोहनीय कर्म के क्षय होने पर ही सम्यक्त्व की उत्पत्ति बतलायी है। ठीक

इसी प्रकार-

श्री उमास्वामि आचार्य ने केवलज्ञान की उत्पत्ति के लिए कारण निर्देश करते हुए दशवें अध्याय के प्रारम्भ में लिखा है-

मोहक्षयाज्ज्ञानदर्शनावरणन्तरायक्षयाच्च केवलम्॥ 1॥

अर्थ- पहले कर्म के क्षय से और तत्पश्चात् ज्ञानावरण दर्शनावरण तथा अन्तराय कर्म के क्षय हो जाने से केवलज्ञान और केवलदर्शन होता है।

यानी-पहले केवलज्ञानावरण का क्षय होता है, तब केवलज्ञान होता है। ऐसा नहीं है कि पहले केवल-ज्ञान हो जाये उसके पीछे केवलज्ञानावरण का क्षय होवे।

इसी बात का श्री कुन्दकुन्द आचार्य अपने आध्यात्मिक ग्रन्थ समयसार की 'सो सव्वणाणदरसी' आदि 160 वीं गाथा द्वारा संकेत करते हैं। एवं श्री पूज्यपाद, अकलंक देव, नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती, श्री अमृतचन्द्र सूरि आदि सभी ग्रन्थकार इसका समर्थन करते हैं।

निरंतर.......

★

कोटिशः अभिनन्दन

आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज

जिन्हें लौकिकता और ममता,
प्रभावित नहीं कर पाती है,
जिन्हें स्वभाव से सहजता ,सरलता,
निर्मलता सदा भाती है,
जिनकी पावन दृष्टि में सदा
अमीर और गरीब सब हैं एक
जिनकी भक्ति व ध्यान में सदा है वीतरागता
सरागता का न लेश
जिनकी वाणी में शास्त्र की गहराई से
मिलती है मधुरता की मिठास
ऐसे हैं गुरुवर श्री विद्यासागर जी
जिनके दर्शन से होता है कर्मों का नाश
आचार्य पदारोहण पर जिन्हें
शत शत बार है वंदन
गुरुवर का कोटिशः है अभिनन्दन।

साभार-आर्जव कविताएँ

गतांक से आगे

पारसचन्द से बने आर्जवसागर

-आर्यिकारत्न श्री प्रतिभामति माताजी

छतरपुर नगर प्रवेश पर आगवानी के लिए छतरपुर समाज के प्रमुख लोग सभी जैन श्रावक-श्राविकाओं के साथ वाद्य एवं जय-जयकारों के साथ मुनि संघ को लेने उपस्थित हुए। साथ ही में मुनिवर की आगवानी के लिए मुनिश्री मंगलानन्दसागरजी पधारे। सर्वप्रथम अतिशय क्षेत्र डेरा पहाड़ी पर मानस्तम्भ प्रतिष्ठा दिनांक 22-2-2008 से 24-2-2008 तक परम पूज्य मुनिश्री आर्जवसागरजी महाराज श्री ससंघ की पावन पवित्र पुनीत उपस्थिति के बीच त्रिदिवसीय मानस्तम्भ वेदी शुद्धि, विम्ब स्थापना एवं कलशारोहण समारोह जो पंचकल्याणक कार्यक्रमों का एक अंश था सम्पूर्ण हुई। समाज के अबाल वृद्ध स्त्री पुरुषों के चेहरों पर खुशियाँ ही खुशियाँ परिलक्षित हो रहीं थीं। माननीय श्री कपूर (घुबारा) अध्यक्ष म.प्र. हस्त शिल्प एवं हथकरघा निगम मर्या. भोपाल (केबिनेट मंत्री) भोपाल की गरिमामयी उपस्थिति रही।

सकल दिगम्बर जैन समाज का तीव्र पुण्योदय अभी क्षय नहीं हुआ था इसलिए मुनिश्रीजी के चरणों वाचना का प्रस्ताव रखा गया तदुपरान्त महाराज के द्वारा रचित तीर्थोदय काव्य की वाचना क्षेत्र पर हुई। इसी बीच अष्टाह्निका महापर्व के मंगल अवसर पर छतरपुर जैन समाज ने अतिशय क्षेत्र डेरा पहाड़ी में नन्दीश्वर द्वीप महामण्डल विधान एवं विश्व शान्ति यज्ञ का मंगल आयोजन आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज के परम शिष्य अध्यात्मयोगी धर्म प्रभावक मुनिश्री आर्जवसागरजी महाराज के मंगल सान्निध्य में आयोजित किया गया। विधान ब्र. त्रिलोकजी के विधानाचार्यत्व में सम्पन्न हुआ। समाज की भारी उपस्थिति में क्षेत्र प्रबंधक श्री पद्मचंद वासल सौधर्म इन्द्र, श्री प्रेमचन्द जी ईशान इन्द्र, श्री सी.सी. जैन, श्री के.सी जैन, श्री नेमीचन्द्र जैन, श्रीम कमल जैन दादा, श्री ज्ञानचन्द्र जी आदि महानुभाव भी उपस्थित रहे व धर्मलाभ लिया। श्रीजी के जयकारों के साथ मुनिश्री आर्जवसागरजी महाराज के अमृत प्रवचनों का भरपूर लाभ मिलता रहा। मुनिश्री की अमृत वाणी से अमृत ऐसे झरा "भक्ति के आकाश से ही आनन्द अमृत बरसता है। भक्त का हृदय क्रोध, मान, माया, लोभ के बादलों से स्वच्छ होकर जब भक्ति की डोलती पालकी में बैठकर परमात्मा की आराधना करता है तब जीवन की बगिया में धर्म ध्यान के महकते फूल खिलते हैं।" इस प्रकार यह आयोजन जो अनेक सफलताओं एवं उपलब्धियों की सौगात जैन समाज को दे गया, समाज के बच्चों में, महिलाओं-पुरुषों में एक धर्ममय जाग्रति का वातावरण महाराजश्री के प्रवचन के दौरान सहज में देखा जा सकता था। म.प्र. के प्रमुख समाचार पत्रों में महाराजश्री के फोटो के साथ सारगर्भित, मार्मिक, हृदयग्राही जिनागम की देशना नियमित प्रकाशित होती रही, जिससे जैन-जैनेत्तर समाज में अपूर्व धर्म प्रभावना हुई। महाराज श्री के व्यक्तित्व एवं कर्त्तव्य के बारे में लिखना मानो सूरज को दीपक दिखाना है। महातपस्वी, महाज्ञानी, महादानी, महाध्यानी, मुख कमल पर धीमी मुस्कान, शांत, सौम्य मुद्रा, सरल हृदय, ख्याति लाभ के अत्यंत दूर, चौथे काल के मुनि सदृश कठोर चर्या के धनी इस कठिन कलिकाल में बिरले ही मुनि होते हैं। यह डेरा पहाड़ी के अतिशय के साथ ही मुनिश्री का भी अतिशय था, जो श्रावकों के मानस में दान की महिमा पैदा हुई एवं उक्त सभी समारोहों में श्रावकों से कल्पना से अधिक विपुल दान राशि बड़ी उदारमना हो क्षेत्र को प्रदान की। पूज्य मुनिश्री के द्वारा रचित जैनागम संस्कार (प्रश्नोत्तर मालिका) जो शिक्षण शिविर एवं पाठशालाओं के लिए बहुत उपयोगी कृति है। जिसका पुन: प्रकाशन

करवाया। सकल दिगम्बर समाज ने कहा कि हम मुनिश्री के जन्मों-जन्मों तक ऋणी रहेंगे एवं इस उपकार को कभी विस्मरण नहीं कर सकेंगे। पश्चात् बंधाजी अतिशय क्षेत्र की कमेटी छतरपुर में आ करके अतिशय क्षेत्र बंधाजी में सम्पन्न होने वाले अजितनाथ भगवान के निर्वाण महोत्सव एवं मेले में पधारने हेतु नम्र निवेदन किया। पश्चात् कुछ समय शहर के मंदिरों को देकर मुनि संघ का विहार बंधाजी क्षेत्र की ओर हो गया।

छतरपुर से धुबेला गाँव पहुँचे। जहाँ के जैन श्रावकों को मुनि संघ की आहार चर्या का लाभ मिला। आहार चर्या के उपरान्त गुरुवर आर्जवसागरजी महाराज ने धुबेला के किले में स्थित म्यूजियम (संग्रहालय) का अवलोकन किया। वहीं सामायिक सम्पन्न कर मध्याह्न में संग्रालय में स्थित जिन प्रतिमाओं को एवं छत्रसाल राजा से संबन्धित ऐतिहासिक पुरातन सामग्रियों का भी अवलोकन किया। तदुपरान्त नौगाँव की ओर विहार किया और वहाँ पर भी जिनालय दर्शन कर प्रवचन और आहारचर्या सम्पन्न हुई। फिर वहाँ से विहार करते हुए जतारा होते हुए बंधाजी पहुँचे। बंधाजी में क्षेत्र का दर्शन करके अपूर्व आनन्द हुआ। पश्चात् श्री अजितनाथ भगवान का निर्वाण महोत्सव एवं वार्षिक मेले का कार्यक्रम पूज्य गुरुवर के मंगल सान्निध्य में बड़ी धर्म प्रभावना के साथ सानन्द सम्पन्न हुआ। मुनिवर ने इस अवसर पर अ.क्षे. बंधाजी पर कविता भी रची। पश्चात् कुछ दिनों तक वास्तव्य करके टीकमगढ़ पहुँचे। टीकमगढ़ में मुनिश्री की भव्य आगवानी बड़ी प्रभावना के साथ हुई ससंघ गुरुवर श्री दि. जैन मांझ मन्दिर पहुँचे वहाँ पर गुरुवर आर्जवसागरजी के सान्निध्य में महावीर जयंती एवं गुरुवर की बीसवीं मुनि दीक्षा जयन्ती (दीक्षा दिवस) बड़े धूमधाम से मनाई गई। जिसमें विशाल शोभायात्रा नगर के मुख्य मार्गों पपौरा चौराहा, कोतवाली होते हुए पुन: मन्दिर पहुँची। शोभायात्रा में धार्मिक जैन भजन बैंड पर गूंज रहे थे। तथा रथ पर श्रीजी की झांकी भी सुशोभित थी। सभी ने अपने घरों के सामने रंगोली सजाई तथा श्रीजी एवं मुनि महाराज की आरती उतारी शोभायात्रा का स्वागत किया। शोभायात्रा के समापन पर भारी संख्या में महिलाएँ पुरुष मौजूद थे। इस अवसर परम पूज्य गुरुवर आर्जवसागरजी के सान्निध्य में 2000, 2004 एवं 2006 में सम्पन्न हुई विद्वत् संगोष्ठियों की स्मारिका 'संगोष्ठी त्रय स्मारिका' तथा महाराज जी द्वारा रचित कृति 'जैनागम संस्कार' एवं महाराजजी की प्रेरणा एवं आशीर्वाद से प्रारम्भ की गई त्रैमासिक पत्रिका 'भाव विज्ञान' के तीसरे अंक का विमोचन जिला न्यायाधीश श्री ए.के. जैन द्वारा किया गया। अन्त में श्रीजी का कलशाभिषेक एवं गुरुवर का प्रवचन सम्पन्न हुआ।

तदुपरान्त एक शुभ तिथि पर श्री पं. गुलाबचंद पुष्प एवं ब्र. जय निशांत के प्रतिष्ठाचार्यत्व में नया मन्दिर का कलशारोहण कार्यक्रम गुरुवर के सान्निध्य में सम्पन्न किया गया। इसी बीच अतिशय क्षेत्र पपौराजी क्षेत्र की वंदनायें भी सम्पन्न हुयीं। नन्दीश्वर कॉलोनी में कुछ दिनों के ग्रीष्मकालीन वास्तव्य के दौरान धार्मिक पाठशाला एवं शिविर गुरुवर आर्जवसागर जी महाराज के विशेष प्रवचनों का आयोजन किया गया। तदुपरान्त मांझ मन्दिर में श्रुतपञ्चमी पर्व के भव्य आयोजन के दौरान समाज द्वारा गुरुवर का वर्षायोग हेतु नम्र निवेदन करते हुए श्रीफल अर्पित भी किये। कुछ दिनों के वास्तव्य के उपरान्त गुरुवर का विहार अतिशय क्षेत्र बानपुर की ओर हो गया। ऐसे क्षेत्र की वंदना करते हुए गुरुवर ससंघ विहार करते हुए चिगलौआ, वार, बांसी होते हुए तालबेहट पहुँचे। वहाँ भव्यों ने भव्य आगवानी की और प्रवचन के दौरान वर्षायोग हेतु श्रीफल अर्पित किये। कुछ दिनों के वास्तव्य के उपरान्त गुरुवर का विहार सिद्धक्षेत्र पावागिरि की ओर हो गया। पावागिरि क्षेत्र दर्शन वंदनादि करके

गुरुवर बबीना पहुँचे। बबीना में प्रवचनादि के माध्यम से धर्म प्रभावना करते हुए झांसी की ओर विहार कर दिया। झांसी नगर में भव्य मंगल प्रवेश हुआ। बी.एच.ई.एल. का मन्दिर व सदर बाजार का मन्दिर दर्शन कर वहाँ भी प्रवचन व आहार चर्या के उपरान्त अतिशय क्षेत्र करगुवांजी के दर्शनार्थ विहार कर दिया। करगुवांजी क्षेत्र पर प्रवचन के मंगल कार्यक्रम के समय इस क्षेत्र की समस्त ट्रस्ट कमेटी एवं पदाधिकारियों द्वारा गुरुवर के चरणों में वर्षायोग हेतु भक्ति-भाव से निवेदन किया गया। यहाँ भी अल्प समय रुककर गुरुवर का विहार दतिया नगर की ओर हो गया। दतिया नगर में आहार चर्या एवं प्रवचनादि का लाभ देते हुए सिद्ध क्षेत्र सोनागिरि की ओर मंगल विहार हो गया।

सोनागिरि में पहुँचकर क्षेत्र के 77 मन्दिरों की वन्दनायें सम्पन्न की। वहाँ पर ग्वालियर के स्वर्ण मन्दिर व दाना ओली से आकर ग्वालियर में वर्षायोग हेतु निवेदन करने के लिए भक्तगण आये। अपनी दीक्षा स्थली सोनागिरि को पाकर गुरुवर आर्जवसागरजी को अपूर्व आनन्द हुआ। यहीं से नंग अनंग कुमारादि साढ़े पाँच करोड़ मुनिराजों ने मोक्ष प्राप्त किया। जिसका कण-कण पवित्र है ऐसे क्षेत्र की वंदना कर अपूर्व आनन्द की अनुभूति हुई। पश्चात् ग्वालियर वालों की वर्षायोग हेतु मंगल भावना देखकर डबरा गाँव से होते हुए ग्वालियर की ओर गुरुवर ने ससंघ विहार किया। जैसे-जैसे ग्वालियर की ओर बढ़ते गये और नगर पास आता गया वैसे-वैसे ग्वालियर के भक्तों की भीड़ बढ़ती चली गयी। पश्चात् सारे भक्तों के साथ एक मंगल बेला में गुरुवर का मंगल भव्य प्रवेश ग्वालियर नगर में हुआ। गुरुवर आर्जवसागरजी का प्रथम प्रवेश नया बाजार में हुआ। फिर दानाओली आदि अनेक जिन मन्दिरों का दर्शन करते हुए स्वर्ण मन्दिर पहुँचे और स्वर्ण मन्दिर के परिसर में गुरुवर का वास्तव्य रहा। प्रतिदिन के प्रवचन बड़ी प्रभावना के साथ चलते रहे। दानाओली के दिगम्बर जैन मन्दिर के आस-पास में स्थित दिगम्बर जैन समाज एवं जैन मिलन के लोगों ने गुरुवर को वर्षायोग हेतु स्वर्ण मन्दिर में प्रवचन के दौरान निवेदन किया। परन्तु अपनी ही साधना एवं प्रभावना का उपयुक्त स्थान श्री पार्श्वनाथ दि.जैन मन्दिर नया बाजार में जाकर वहाँ की समाज के वर्षायोग हेतु विशेष आग्रह को देखकर अपने वर्षायोग की स्थापना की। 17 जुलाई 2008 को स्थापना के कार्यक्रम निकट स्थित विशाल महावीर भवन कम्पू में सम्पन्न हुआ। संत शिरोमणि आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज के शिष्यगणों का यह प्रथम बार वर्षायोग ग्वालियर नगर में स्थापित हुआ। स्थापना के दिन सर्वप्रथम मंगलाचरण हुआ। इसके पश्चात् भगवान महावीर स्वामी एवं आचार्यश्री के चित्र का अनावरण व दीप प्रज्ज्वलन वीरेन्द्र गंगवाल, लालमणि जैन आदि समाज गणमान्य लोगों द्वारा किया गया। चातुर्मास की स्थापना हेतु सकल जैन समाज ने श्रीफल भेंट कर निवेदन किया। तीन चातुर्मास कलशों की बोली के माध्यम से चयन किया गया। इसके पश्चात् मुनिश्री को शास्त्र भेंट व पाद प्रक्षालन हुए। मुनि श्री ने चातुर्मास का महत्त्व विषय पर प्रकाश डाला। प्रत्येक रविवार को जिनागम संगोष्ठी का कार्यक्रम व प्रश्न मंच निश्चित हुए। अंत में पूज्य गुरुवर का मांगलिक प्रवचन हुआ जो नूतन था धर्म के रहस्यों का जिस तरह सूक्ष्म विवेचना तत्त्व का चिंतन और भावों की निर्मलता, पवित्रता शुद्धि रूप जो प्रवचन गंगा का प्रवाह बहा, ऐसा जीवन में पहली बार लोगों ने सुना। अंत में हजारों नर-नारियों के साथ स्थापित कलशों के गुरुवर के सान्निध्य में भव्य शोभा यात्रा, धार्मिक गीतों के साथ बेंड बाजों के साथ नया बाजार जैन मन्दिर पहुँची जहाँ कलशों को स्थापित किया गया।

क्रमशः...........

मन और इन्द्रियों को वश में करना संयम है समय पर काम करना संयमी की पहचान है

आचार्यश्री 108 विद्यासागरजी महाराज

चंद्रगिरि डोंगरगढ़ में विराजमान संत शिरोमणि आचार्यश्री ने कहा कि आप लोग संयम की बात कर रहे हैं यह सुनकर अच्छा लगा। संयम की परिभाषा समय पर काम करना एवं मन और इन्द्रियों को वश में करना ही संयम है। आप लोग संयम दिवस मना रहे हैं तो अपव्यय से बचना चाहिये। यदि आपके परिवार में चार सदस्य हैं और आपके पास चार से ज्यादा गाड़ियाँ हैं तो यह अपव्यय है। इसकी जगह यदि आप दो गाड़ियों से ही काम लेते हैं तो बाकी दो रखने से क्या फायदा इसे त्याग दो। यहाँ इस पांडाल में जितने लोग बैठे हैं उनमें से कितने लोग हैं जो परिवार के सदस्यों की संख्या से ज्यादा गाड़ी रखते हैं और आज संयम के दिन वे गाड़ियों का अपव्यय न करने का नियम लेंगे हाथ उठाइये। जिस प्रकार एक दुकानदार एक-एक पैसे का हिसाब रखता है कि किसको कितना देना है और किससे कितना लेना है ? उसे वह खाते में लिखकर पाई-पाई का हिसाब सुरक्षित रखता है इसी प्रकार हमारा एक-एक पल कीमती है उसका हमें सदुपयोग करना चाहिये। हमारे लिए तो संयम दिवस है और दिवस तो एक दिन का ही होता है आप लोग इसे तीन दिन मनाये या सालभर मनाये हमारे लिए तो संयम प्रतिपल आजीवन है। आचर्यश्री ने कहा कि एक बार एक व्यक्ति गुरुजी (आचार्यश्री ज्ञानसागर महाराज जी) के पास आता है और कहता है कि मेरी एक जिज्ञासा है कृपया कर आप उसका समाधान कीजिये। वह कहता है कि आपकी उम्र कितनी है ? तो गुरुजी उसकी बात का कोई उत्तर नहीं देते फिर वह व्यक्ति दोबारा पूछता है कि आपकी उम्र कितनी है ? इस बार भी गुरु जी कुछ उत्तर नहीं देते फिर वह व्यक्ति गुरुजी से विनम्र होकर तीसरी बार पूछता है कि आप मेरी जिज्ञासा का समाधान कीजिये और कृपया कर बताइये कि आपकी उम्र कितनी है ? महाराज; तो गुरुजी कहते हैं कि कुछ समय पहले मैंने सामायिक किया और अभी मैं प्रतिक्रमण कर के आ रहा हूँ, बस इतनी ही मेरी उम्र अभी हुई है। आचार्यश्री कहते हैं कि पूजा समय पर होनी चाहिये और द्रव्य का चांवल कभी नीचे नहीं गिरना चाहिये क्योंकि आप लोग उसे पूजा के निमित्त से लाते हो और चढ़ाने की जगह जमीन पर बिखराते हो फिर उसमें पैर पड़ जाये तो पुण्य की जगह पाप का बन्ध हो जायेगा। हमें पूजा को समझकर पढ़ना चाहिये और उसे अपने जीवन में भी उतारना चाहिये तभी उसका आनंद आयेगा और उसका महत्व भी होगा।

विवाह धर्म प्रभावना में सहायक

आचार्यश्री 108 विद्यासागरजी महाराज

आचार्यश्री ने कहा कि पहले असि, मसि, कृषि, वाणिज्य के हिसाब से कार्य होता था और विवाह में कन्यादान होता था इस प्रथा में कन्या दी जाती थी। इसमें कन्या का आदान-प्रदान नहीं होता था। आज पाश्चात्य सभ्यता का चलन होने के कारण सब प्रथा में परिवर्तन आ रहे हैं, यह विचारणीय है। पहले पिता अपनी बच्ची के लिए योग्य वर ढूंढता था पर आज बच्चे से पूछे बिना कोई काम नहीं कर सकते हैं। पहले बच्ची अपने पिता की बात को ही अपना भाग्य समझती थी अब ऐसा देखने और सुनने को नहीं मिलता है। आचार्यश्री ने

मैनासुन्दरी और श्रीपाल का उदाहरण देकर बताया की किस तरह से उन्होंने अपने भाग्य पर भरोसा किया और अंत में उनका भला ही हुआ। सिद्ध चक्र विधान का विशेष महत्व माना जाता है। आप लोग अष्टाह्निका, दशलक्षण पर्व को ही विशेष महत्व देते हो हमारे लिए तो मोक्ष मार्ग में हर दिन ही विशेष भक्ति, स्वाध्याय आदि का होता है। सिद्ध चक्र विधान में प्रतिदिन शांतिधारा होती थी और इसके गंधोदक को वह अपने कुष्ठ शरीर पर लगाने से उसका रोग अष्टाह्निका पर्व के अंतिम दिन में पूरा का पूरा ठीक हो जाता है। यह सब सिद्धचक्र विधान को श्रद्धा, भक्ति भाव, विश्वास के साथ करने से हुआ था। आज लोग पुरुषार्थ नहीं करना चाहते हैं और वे आलस के कारण ताजा घर में बना खाने की जगह पैकिंग फूड ले रहे हैं, जिसके कारण वे खुद तो बीमार पड़ रहे हैं साथ में दो-दो साल के बच्चे को सुगर आदि-आदि बीमारियाँ हो रही हैं। इसके जिम्मेदार माता-पिता खुद हैं उन्हें अपने बच्चों को अच्छे संस्कार देना चाहिये। विवाह धर्म प्रभावना के लिए किया जाता है। वर-वधु का विवाह होता है, फिर संतान होती है। वे अपनी संतान को अपने धर्म के अनुरूप संस्कार देते हैं ऐसे पीढ़ी दर पीढ़ी धर्म की प्रभावना होती रहती है। पहले स्वयंवर होता था जिसमें कन्या अपने लिए वर पसंद करती थी। इसमें कभी वर को कन्या पसंद करने का अवसर नहीं दिया जाता था। यह अधिकार केवल कन्या का ही होता था परन्तु आज बेटियाँ बेची जा रही हैं जो धर्म और समाज के लिए घातक है। आज लोग दिन में दर्पण कई बार देखते हैं और तो और मोबाइल के द्वारा भी दर्पण का इस्तेमाल किया जाता है और उसे जेब में रखते हैं तो उसका उपयोग भी कई बार किया जाता है। जो शरीर को देखता है उसे आत्मा का चिंतन होना कठिन है। आत्मा के चिंतन के लिए सम्यग्दर्शन, सम्यक्ज्ञान और सम्यग्चारित्र अनिवार्य है। इसमें शरीर का केवल उपयोग किया जाता है उसे ज्यादा महत्व नहीं दिया जाता है।

मोह, राग और द्वेष आत्मा को किंकर्त्तव्यविमूढ़ बनाता है

आचार्यश्री 108 विद्यासागरजी महाराज

चन्द्रगिरि डोंगरगढ़ में आचार्यश्री ने मोह, राग और द्वेष की परिभाषा बताते हुए कहा कि मोह किसी भी वस्तु या मनुष्य आदि से हो सकता है जैसे दूध में एक बार जामन मिलाने पर वह जम जाता है उसमें दोबारा जामन नहीं डालना पड़ता। उसी प्रकार मनुष्य भी मोह में जम जाता है। राग और मोह में अंतर होता है। राग के कारण वस्तु का वास्तविक स्वरूप न देखकर उसका उल्टा स्वरूप दिखने लगता है। जैसे कोई वस्तु है, यदि आपको उससे राग होगा तो आप कहोगे कि यह वस्तु बहुत अच्छी है और उसी वस्तु से किसी को द्वेष होगा तो कहेगा कि यह वस्तु खराब है। बड़े-बड़े विद्वान, श्रमण, श्रावक आदि भी इस मोह, राग और द्वेष से नहीं बच पाये हैं। आचार्यश्री ने कहा कि वे आज पद्मपुराण पढ़ रहे थे तो उसमें बताया गया है कि रावण बहुत विद्वान, बहुत बड़ा पंडित , बहुत ज्ञानी, धनवान, ताकतवर था परन्तु श्रीराम की धर्मपत्नि सीता से उसे मोह होने के कारण उसका सर्वनाश हो गया एवं उसका भाई विभीषण ने भी उसका साथ छोड़ दिया था। आज बहुत से लोग शास्त्र, ग्रन्थ आदि पढ़कर पंडित, ज्ञानी हो गए हैं उन्हें इस ज्ञान का उपयोग पहले अपने कल्याण के लिए करना चाहिए फिर दूसरों का कल्याण के लिए करना चाहिए फिर दूसरों का कल्याण करना तो अच्छी बात है ही।

संकलन : निशांत जैन, डोंगरढ़
मो.: 09301301540

वह लाजवाब है

(पूज्य आचार्यश्री : एक शब्द चित्र)

वह मुनिगण-मुकुट है
उनका कोई जवाब नहीं
वह सैकड़ों में अकेला है
अलबेला है
उसका कोई जोड़ नहीं
यह तो बस वह ही है।

वह भला है
भोला है
भद्र भावों से भरा है
खरा है
वदन का इकहरा है
छरहरा है
उम्र से जवान है
साधक महान् है
भूखा है ज्ञान का
शत्रु है अभिमान का
भुलावों से दूर है
तपश्चरण में शूर है।

उसका चिन्तन मौलिक है
उसकी वार्ता आलौकिक है
विचारों में उदारता है
प्रमाणिकता है
शालीनता है
सर्वजनहितैषता है।

साम्प्रदायिकता से वह परे है
संकीर्णता के घेरों से मुक्त है।

वह आत्मजयी है
आत्म केन्द्रित है
नासादृष्टि है
निजानन्द-रसलीन है
मोह-माया-मत्सर-विहीन है
उसे लुभाती नहीं है
बाहरी दुनिया की चमक,
उसके स्वभाव में है
एक स्वाभिमानी की ठसक।
उसके सबसे बड़े गुण हैं-
अनासक्ति और निःस्पृहता
क्षमाशीलता और समता
निर्मममता और निर्भयता।

वह आलोक-पुंज है
ज्ञान-दीप है
ज्योति-पुरुष है
विराजी रहती है प्रतिक्षण
उसके चेहरे पर
एक निर्मल-निश्छल मुस्कान
उसकी हर छवि है अम्लान
उसका नहीं है जवाब
वह है लाजवाब।

रचयिता : प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाश जैन
फिरोजाबाद

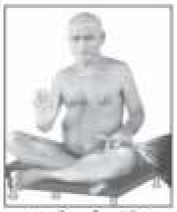

स्वाध्याय प्रेमियों के लिए अपूर्व स्वर्ण अवसर
सम्यग्ज्ञान भूषण पदवी (डिग्री)
एवं
सिद्धान्त भूषण पदवी (डिग्री) प्राप्त करें।

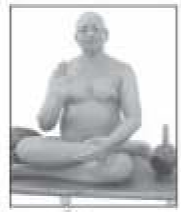

संत शिरोमणि
आ.श्री विद्यासागरजी महाराज

आ.श्री आर्जवसागरजी महाराज

भव्य बन्धुओं!

प. पू. आचार्य श्री आर्जवसागरजी महाराज की प्रेरणा एवं आशीर्वाद से भाव विज्ञान परीक्षा बोर्ड द्वारा आने वाले वर्षायोग से दो-दो वर्षीय पोस्टल कोर्स हेतु धार्मिक (चारों के अनुयोगों से संबन्धित) प्रश्नोत्तरी एवं प्रश्न पत्र अपनी इसी भाव-विज्ञान पत्रिका से प्रकाशित किये जावेंगे जिसमें परीक्षा हेतु फार्म (आवेदन पत्र) भरने वाले पत्रिका के सदस्यों के अतिरिक्त आचरणवान भव्यगण, किसी भी उम्र के हों, भाग ले सकेंगे। इस पावन योजना की पूर्ण जानकारी विशेष रूप से भाव-विज्ञान पत्रिका के मार्च वाले अंक में प्रकाशित की जावेगी।

धन्यवाद।

सम्पादक

शक्ति अपव्यय से बचो

जिस प्रकार बातों-बातों में पैसा खर्च नहीं किया जाता है इससे नुकसान होता है, उसी प्रकार बातों-बातों में वचनबल का प्रयोग नहीं किया जाता इससे कर्मबंध होता है।

(मार्च 1997-सिद्धवरकूट)

साभार-**दृष्टान्त से सिद्धान्त की ओर**

(आचार्यश्री विद्यासागरजी की चिन्तन यात्रा)

प्रथम खण्ड

जैन धर्म के संबंध में शुभ विचार

डॉ. सुब्राय एम. भट्ट

आज के इस वैज्ञानिक युग में बुद्धिजीवी मानव अपने को निरंतर शक्तिशाली बनाने का प्रयास कर रहा है और वह उन्हीं सत्यों एवं तथ्यों को मान्यता दे रहा है, जो प्रयोग-परीक्षण की कसौटी पर खरे उतर रहे हैं। इसके बावजूद वह अपने भीतर एक शून्यता और अशान्ति का गहन अन्धकार महसूस कर रहा है। लगता है, इस शक्ति-उपलब्धि में वह शान्ति खोता जा रहा है। इससे एक तथ्य सामने अवश्य आया है कि जिन्होंने मात्र विज्ञान की खोज की वे शक्तिशाली तो हो गये, पर अशान्ति और विपन्नता में डूबे हुए हैं और जिन्होंने मात्र धर्म का अनुसन्धान किया, वे शान्त हो गये पर अशक्त और पिछड़े हैं। ऐसा मानव या राष्ट्र जो अपने को शक्ति और शान्ति में अखण्ड रूप से प्रवर्तमान रखना चाहता है, उसे विज्ञान और धर्म, दोनों की शरण लेनी होगी, क्योंकि एक की भी कमी से मानव की साधना और राष्ट्र की संस्कृति अधूरी रह जाएगी। अतएव धर्म और विज्ञान में समन्वय लाने की अनिवार्य आवश्यकता है। यद्यपि विज्ञान का विषय उन प्रयोगों का अध्ययन और निरीक्षण है जो प्रकृति की गतिविधियों से संबंध हैं जबकि दर्शन वहां से शुरू होता है, जहाँ विज्ञान अपनी अन्तिम पराकाष्ठा पर पहुँच जाता है। फिर भी सत्य हर पहलू से सत्य होता है और इसलिए धर्म या दर्शन के सत्य भी किसी भी तराजू के पलड़े से ताँले जा सकते हैं। यह विश्लेषण, सिद्धान्तों के प्रति अधिक आस्था पैदा करे, बस यही इसका उद्देश्य है।

जैनदर्शन एक मौलिक दर्शन है और विश्व के अन्य दर्शनों से अपने में अनेक विशेषताएँ रखता है। आज से सहस्रों वर्ष पूर्व जब वर्तमान युग के समान न वैज्ञानिक यन्त्र थे और न प्रयोगशालाएँ, उस समय इसने अनेक ऐसे विलक्षण सूत्रों व सिद्धान्तों का निरूपण किया जो तत्कालीन किसी भी अन्य दर्शन में विद्यमान नहीं थे। वे सूत्र इतने मर्म व अर्थगाम्भीर्य लिये हुए थे कि अन्य दर्शनों के विद्वान् अनके अन्तस्तल तक नहीं पहुँच पाते थे। फलतः उनकी ओर से उन सूत्रों का विरोध व खण्डन होता रहता था और यह खण्डल तब तक चलता रहा जब तक कि विज्ञान ने विकसित होकर उन सूत्रों का रहस्योद्घाटन कर उनकी सत्यता को प्रत्यक्ष प्रमाणित न कर दिया। निःसन्देह विज्ञान-जगत में हो रहे नित्य-नूतन आविष्कारों तथा अनेक वैज्ञानिक मान्यताओं का अभूतपूर्व वर्णन जैन-शास्त्रों में किया गया है। यही नहीं अनेक ऐसी जटिल समस्याएँ, जिनके बारे में आज के वैज्ञानिक प्रायः हतप्रभ हैं, उनका अनूठा समाधान भी कई जगह पर जैन-आगमों में प्राप्त होता है। उदाहरणार्थ स्याद्वाद सिद्धान्त को ही लीजिए। जैनदर्शन प्रत्येक पदार्थ को अनन्त गुणात्मक मानता है और उन गुणों में परस्पर विरोधी गुणों को भी स्थान देता है। अन्य दर्शनकार दो विरोधी गुण एक साथ रह सकें, इससे सहमत नहीं हैं। परन्तु विज्ञान के 'द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के विरोधी समागम' (Unity of opposition) के सिद्धान्त ने आज इसे सत्य प्रमाणित कर दिया है। दूसरा उदाहरण, वनस्पति में जीव है-यह मान्यता जैनदर्शन की बहुत पुरानी है। वैज्ञानिक लोग इस बात को मानने के लिए तब तक तैयार नहीं हुए जब तक कि श्री जगदीशचन्द्र बोस ने अपने यन्त्रों के द्वारा यह पूर्ण रूप से सिद्ध नहीं कर दिया। इसी प्रकार पानी में भी जीव हैं और इसीलिए जैन साधु कच्चे पानी का उपयोग नहीं करते हैं - इसे वैज्ञानिकों ने माइक्रोस्कोप के आविष्कार के बाद ही मान्यता दी।

जैनदर्शन में उपर्युक्त विलक्षण सिद्धान्तों के साथ-साथ आरोग्य सम्बन्धी वैज्ञानिक जानकारी प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से कथाओं, प्रवचनों एवं आगमों के माध्यम से लोगों को दी गयी हैं। जैनदर्शन सम्पूर्ण विश्व के प्राणियों को दुःख, दर्द एवं पीड़ा से छुटकारा दिलाने में पूर्ण विश्वास रखता है। जैनधर्म

में व्यक्ति को अपने जीवन में रोजाना आहार, विहार, कार्य, आराम, मनोरंजन, वस्त्र के उपयोग, व्यवहार, संयम, मर्यादा आदि के नियमों के पालन करने हेतु कैसे जीवन-यापन करना चाहिए, स्पष्ट तौर से बताया गया है। स्वास्थ्य मानव की प्राकृतिक स्थिति है, परन्तु इस स्वास्थ्य को शारीरिक, मानसिक एवं पर्यावरण से सम्बन्धित प्राकृतिक नियमों के अनुसार जीवन जीने के फलस्वरूप ही अच्छी स्थिति में रखा जा सकता है।

जिसके सत्त्ववादि गुण तथा वातादि दोष, जठर तथा काय की अग्नि, रसादि सप्तधातु, पुरीशादि मल-इनकी क्रियाएँ सम हों तथा जिसकी आत्मा, इन्द्रियाँ तथा मन प्रसन्न हो वह स्वस्थ कहलाता हैं।

''सत्त्व रजस्तम इति मनसाः स्युस्त्रयो गुणाः।
तेषां गुणानां साम्यं यत्तदाहुः स्वस्थलक्षणम्।।'' - महाभारत

सत्त्व, रजस् और तमस्-ये मन के तीन गुण होते हैं। इन गुणों की जो साम्यावस्था होती है, इसको भी स्वास्थ्य कहते हैं। शारीरिक गुणों को वैद्यक में धातु, दोष तथा मल कहते हैं।'

शरीरदूषणाद् दोषा धातवो देहधारणात्।
वात पित्त कफा ज्ञेया मालिनीकरणान्मलाः।। - शार्ङ्गधरसंहिता

मानसिक गुणों को साम्यावस्था में वैद्यक में गुण ही या महागुण कहते हैं और विषमावस्था में दोष कहते हैं ओर दोषों में सत्त्व का समावेश नहीं होता।

सत्तवं रजस्तमश्चेति त्रयः प्रोक्ता महागुणाः।।
रजस्तमश्च मनसो द्वौ च दोषावुदाहृतौ।। - अष्टाङ्गसंग्रह

उपर्युक्त श्लोकों में शारीरिक, मनोवैज्ञानिक, नैदानिक और लाक्षणिक (Symptomatic) दृष्टि से स्वास्थ्य की परिभाषा वर्णित है। आरोग्य अर्थात् रोग और दुर्बलता का न होना ही नहीं है, अपितु शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक स्वास्थ्य के तीनों पहलू जो कि एक दूसरे से जुड़े हुए हैं, अच्छी स्थिति में हों अर्थात् स्वास्थ्य के ये तीनों कारक स्वस्थ हों।

जैनधर्म शारीरिक स्वास्थ्य के साथ-साथ मानसिक एवं आध्यात्मिक स्वास्थ्य को प्राप्त करने पर जोर देता है। जैन मतानुसार शरीर को केवल मांसपेशियों का ढाँचा नहीं मानना चाहिए, इसके अन्तर्गत मानव व्यक्तित्व के मानसिक, आत्मिक पहलुओं को रखा जाना चाहिए। जैनदर्शन में आत्मिक सुख को ही श्रेष्ठ सुख माना है। मानव को सुख प्राप्त करने हेतु आत्मिक क्रियाकलापों पर ध्यान देना होगा। इसलिए स्वास्थ्य की परिभाषा में चतुर्थ घटक आध्यात्मिक स्वास्थ्य को भी जोड़ा जा सकता है। आध्यात्मिक स्वास्थ्य के इस घटक से जीवन वास्तविक रूप में उपयोगी बनाया जा सकता है। मानव चरित्र, नैतिक विकास, मर्यादित जीवन, झूठ, फरेब, हिंसा का त्याग, सौहार्दपूर्ण व्यवहार, विनय, सेवा आदि को आध्यात्मिक स्वास्थ्य के अन्तर्गत जोड़कर सम्पूर्ण सकारात्मक स्वास्थ्य को मानव प्रयासों से प्राप्त किया जा सकता है। इस सब कार्यकलापों का जैन श्रावक व्रत में विस्तार से समावेश किया गया है तथा श्रावक व्रत के अन्तर्गत बताए गये बारह व्रतों का पालन करके जैन श्रावक सच्चा सकारात्मक स्वास्थ्य प्राप्त कर

सकता है।

जैनदर्शन में साधु धर्म और गृहस्थ धर्म नामक दो प्रकारके धर्म बतलाए गये हैं। शास्त्रीय भाषा में इसे अनगार और आगार धर्म कहते हैं। साधुओं के लिए पाँच महाव्रतों का विधान किया है - अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। इन पाँच व्रतों का साधुओं को पूर्ण पालन करना पड़ता है। गृहस्थों के लिए बारह व्रतों का विधान किया है। इन बारह व्रतों में साधु के पाँच महाव्रतों का समावेश भी हो जाता है, परन्तु जिन व्रतों का साधु को पूर्व रूप से पालन करना पड़ता है, गृहस्थ उनका ही आंशिक रूप से पालन करता है, क्योंकि गृहस्थ संसारी है। संसारी अवस्था में रहकर पाँच महाव्रतों का पूर्णरूपेण पालन करना उसके लिए अशक्य है। अतः इन व्रतों के पालन करने के लिए गृहस्थ आवश्यक छूट रख लेता है। गृहस्थ के लिए जो बारह व्रत कहे गये हैं, उन्हें तीन विभागों में विभक्त कर दिया गया है - पाँच अणुव्रत (अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह), तीन गुणव्रत (दिशा-परिमाण, उपभोग-परिभोग-परिमाण, अनर्थदण्ड-विरमण), चार शिक्षाव्रत (सामायिक, देशावकाशिक, प्रौषधोपवास व अतिथि-संविभाग)। ये बारह व्रत इतने महत्वपूर्ण हैं कि प्रत्येक मानव यदि इनका पालन करने लग जाए तो वह अपना जीवन स्वस्थ व सुखी बना सकता है। आरोग्य-लाभ प्राप्त करने के लिए जैनधर्म में बताए गये बारह व्रतों का पालन करने से दिनचर्या एवं जीवन चर्या नियमित बन जाएगी। 'भगवद्गीता' में भी कहा गया है कि युक्ताहार-विहार से व्यक्ति का जीवन दुःख रहित हो जाता है।

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति न दुःखहः ।। - भगवद्गीता

जैनधर्म में प्रत्येक श्रावक व्रत के अन्तर्गत क्या करना, क्या नहीं करना-यह स्पष्ट रूप से बताया गया है। उनका पालन करके हम स्वास्थ्य को बनाए रख सकते हैं, स्वास्थ्य का उत्थान कर सकते हैं। भारत के प्राचीन ऋषि-मुनियों का कथन भी यही रहा कि सम्पूर्ण मानव के विकास की आधारशिला भी स्वास्थ्य पर ही आधारित है।

धर्मार्थकाममोक्षाणां आरोग्यं मूलमुत्तमम् ।। - चरकसंहिता
धर्मार्थकामकोक्षाणां आरोग्यं साधनं यमः ।। - स्कन्दपुराण
शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम् ।। - कुमारसम्भव

अधिक बैठने से अजीर्णादि रोग उत्पन्न होते हैं, विषयों के अधिक सेवन से राजयक्ष्मा रोग उत्पन्न होता है। इन कारणों को जैन गृहस्थ या अन्य गृहस्थ आसानी से हटाकर जीवन को रोगमुक्त रख सकता है।

तप धर्म का एक उत्कृष्ट अंग है। जीवन में तेजस् ही मुख्य तत्त्व है जिसकी उपलब्धि का मुख्य साधन तप है। तपरहित जीवन बुझे दीपकवत् निष्प्राण होता है। वैदिक ग्रन्थों में भी कहा है 'तपसा वै लोके जयन्ति।' अर्थात् तप से तेजस्वी बन मनुष्य लोक में विजयश्री, समृद्धि प्राप्त करता है। अतः तप जीवन का, धर्म का, संस्कृति का और समग्र विश्व का मूलभूत प्राण है। जैनधर्म में तप की व्याख्या करते हुए कहा गया है - 'स्वेच्छा से, समभावपूर्वक विवेक से इच्छाओं को विविध विषयों से रोकना तप हैं। '' जैनदर्शन के अनुसार तपस्या ना केवल आत्मशुद्धि के लिए कर्मों के बन्धनों को हटाने हेतु ही महत्वपूर्ण है, अपितु मानसिक, सामाजिक, आध्यात्मिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य के लिए भी उपयोगी है।

संयम की विशेष शुद्धि, कर्मों की निर्जरा हेतु आहार का त्याग करना अनशन व्रत है। इस व्रत में अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य-इन चारों प्रकार के आहार का त्याग किया जाता है। महीने में एक या दो बार

उपवास करने से शरीर की दूषित सामग्री का निवारण होता है, शरीर के पाचन संस्थान में अंगों को आराम मिलता है तथा पाचन-शक्ति में सुधार होता है।

भोजन में वसा के नहीं लेने से या कम लेने से खून में 'कोलेस्ट्रोल' नामक तत्त्व की मात्रा को बढ़ने से रोका जा सकता है। इसके फलस्वरूप मोटापा, उच्चरक्तचाप, हृदय रोगों को रोका जा सकता है। इसी प्रकार नमक, शक्कर व मिठाई रहित भोजन से गुर्दे सम्बन्धी रोगों, मधुमेह एवं गठिया से बचा जा सकता है। आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान भी भोजन में उक्त निषेधों को को मानता है। इसके अतिरिक्त वैज्ञानिक निष्कर्षों के आधार पर यह सिद्ध हो गया है कि मांसाहार से लाभ की अपेक्षा शरीर को अधिक हानि उठानी पड़ती है, जिनमें रक्तचाप और एक्जीमा जैसे भयानक रोगों की सम्भावना है।

कायोत्सर्ग करने में शरीर द्वारा बार-बार उठना, बैठना, झुकना, खड़ा होना, आसन, ध्यान आदि करने से शरीर हल्का हो जाता है व मोटापे से बचा जा सकता है। ध्यान, आसन, प्रतिक्रमण, वन्दना, स्वाध्याय, कायोत्सर्ग आदि से नैतिक एवं आध्यात्मिक स्वास्थ्य में सुधार होता है, जीवन उपयोगी बनता है, सबल चरित्र का निर्माण होता है तथा मानसिक तनावों, मानसिक रोगों से छुटकारा मिलता है। तप के अन्तर्गत बताई गयी स्वास्थ्य सम्बन्धी क्रियाओं के अतिरिक्त जैनधर्म में स्वास्थ्य-वृद्धि एवं रोग-निवारण सम्बन्धी अनेक विधियाँ हैं, जो यद्यपि श्रावकों के पाँच अणुव्रतों से सम्बन्धित हैं, जो हिंसा के त्याग, झूठ के त्याग, चोरी के त्याग, ब्रह्मचर्य के पालन, परिग्रह के हटाव से जुड़ी हुई हैं। इनके पालन से आत्मविकारों को दूर करने में सफलता मिलती है।

जीवहिंसा न करने के नियम का दृढ़ता से पालन करने से जैन गृहस्थ अपना घर, घर के आस-पास के पर्यावरण को सूखा व स्वच्छ रखता है तथा घर में काम लिए हुये पानी को इकट्ठा नहीं होने देता है तो मच्छर पैदा नहीं होंगे। मच्छर नहीं होंगे तो मलेरिया, फिलेरिया नामक रोग नहीं होंगे। जैनदर्शन में स्वच्छता एवं सफाई हेतु मानव-मल के सही ढंग से निष्कासन व कचरे के सही जीवहिंसा रहित निष्कासन पर जोर दिया गया है। इसके पालन से गन्दगी नहीं होगी तो रोग नहीं होगा।

खाद्य पदार्थों में मिलावट आज की आम स्वास्थ्य समस्या है। खाने-पीने में उपयोग में आनेवाली वस्तुओं में मिलावट से कई रोग उत्पन्न होते हैं। दूध में मिलावट, घी में मिलावट, हल्दी में, जीरा में, नमक में, शक्कर में, धनिया में मिलावट इन सबको रोकने के लिए जैन गृहस्थों के तीसरे अचौर्य व्रत का पालन अच्छी तरह किया जाए तो समस्या का समाधान हो सकता है।

छने हुए पानी का उपयोग जैन गृहस्थ के लिए जहाँ अहिंसा के सिद्धान्त की वजह से आवश्यक है, वहाँ पानी से उत्पन्न रोग दस्त, पेचिश, मोतीझरा, बाला (नाहरू) आदि की रोकथाम हेतु भी स्वच्छ साफ कपड़े से छने हुए पानी का उपयोग आवश्यक है। जैन गृहस्थों को रात के भोजन खाने व पकाने का निषेध यद्यपि अहिंसा के पालन हेतु है, तथापि स्वास्थ्य की दृष्टि से भी बहुत महत्वपूर्ण है।

इस प्रकार जैनधर्म में आरोग्य सम्बन्धी, जीविका सम्बन्धी, चारित्र सम्बन्धी, जीवन जीने सम्बन्धी अनेकानेक नियम बताये हैं। उनका पालन करने से, जल से, भोजन से उत्पन्न रोगों, रजित रोगों, मानसिक रोगों, संक्रमण रोगों से बचा जा सकता है। तप के द्वारा हम आसानी से शारीरिक, मानसिक वा आध्यात्मिक स्वास्थ्य में उत्थान कर सकते हैं तथा गृहस्थ के बारह व्रतों का पालन करके परिवार में, समाज में तथा सम्पूर्ण विश्व में स्वस्थ एवं सुखमय सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं।

साभार - जैनधर्म में विज्ञान, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली

विदेशों में जैन धर्म एवं समाज

-डॉ. त्रिलोकचन्द्र कोठारी

अमेरिका, फिनलैण्ड, सोवियत गणराज्य, चीन एवं मंगोलिया, तिब्बत, जापान, ईरान, तुर्किस्तान, इटली, एबीसिनिया, इथोपिया, अफगानिस्तान, नेपाल, पाकिस्तान आदि विभिन्न देशों में किसी-न-किसी रूप में वर्तमानकाल में जैनधर्म के सिद्धान्तों का पालन देखा जा सकता है। उनकी संस्कृति एवं सभ्यता पर इस धर्म का प्रभाव परिलक्षित होता है। इन देशों में मध्यकाल में आवागमन के साधनों का अभाव एक-दूसरे की भाषा से अपरिचित रहने के कारण, रहन-सहन, खान-पान में कुछ-कुछ भिन्नता आने के कारण हम एक-दूसरे से दूर हटते ही गये और अपने प्राचीन सम्बन्धों को सब भूल गये।

अमेरिका में लगभग 2000 ईसापूर्व में संघपति जैन आचार्य 'क्वाजन कोटल' के नेतृत्व में श्रमण साधु अमेरिका पहुँचे और तत्पश्चात् सैकड़ों वर्षों तक श्रमण अमेरिका में जाकर बसते रहे। अमेरिका में आज भी अनेक स्थलों पर जैनधर्म श्रमण-संस्कृति जितना स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। वहाँ जैन-मन्दिरों के खण्डहर, प्रचुरता में पाये जाते हैं।

कतिपय हस्तलिखित ग्रन्थों में महत्त्वपूर्ण प्रमाण मिले हैं कि अफगानिस्तान, ईरान, ईराक, टर्की आदि देशों तथा सोवियत संघ के जीवन-सागर एवं ओब की खाड़ी से भी उत्तर तक तथा जाटविया से उल्लई के पश्चिमी छोर तक किसी काल में जैनधर्म का व्यापक प्रचार-प्रसार था। इन प्रदेशों में अनेक जैन-मन्दिरों, जैन-तीर्थंकरों की विशाल मूर्तियों, धर्मशास्त्रों तथा जैन-मुनियों की विद्यमानता का उल्लेख मिलता है।

चीन की संस्कृति पर जैन-संस्कृति का व्यापक प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। चीन में भगवान ऋषभदेव के एक पुत्र का शासन था। जैन-संघों ने चीन में अहिंसा का व्यापक प्रचार-प्रसार किया था, अति प्राचीनकाल में भी श्रमण-सन्यासी यहाँ विहार करते थे। हिमालय क्षेत्र आविस्थान को दिया और कैस्पियाना तक पहले ही श्रमण-संस्कृति का प्रचार-प्रसार हो चुका था।

चीन और मंगोलिया में एक समय जैनधर्म का व्यापक प्रचार था। मंगोलिया के भूगर्भ से अनेक जैन-स्मारक निकले हैं तथा कई खण्डित जैन-मूर्तियाँ और जैन-मंदिरों के तोरण मिले हैं, जिनका आँखों देखा पुरातात्त्विक विवरण 'बम्बई समाचार' (गुजराती) के 4 अगस्त सन् 1934 के अंक में निकला था।

यात्रा-विवरणों के अनुसार सिरगम देश और ढाकुल की प्रजा और राजा सब जैन धर्मानुयायी हैं। तातार-तिब्बत, कोरिया, महाचीन, खासचीन आदि में सैकड़ों विद्या-मन्दिर हैं। इस क्षेत्र में आठ तरह के जैनी हैं। चीन में 'तलावारे' जाति के जैनी हैं। महाचीन में 'जांगडा' जाति के जैनी थे।

चीन में जिगरम देश ढाकुल नगर में राजा और प्रजा जैन-धर्मानुयायी हैं। पीकिंग नगर में 'तुबाबारे' जाति के जैनियों के 300 मन्दिर हैं, जो सब मन्दिर शिखर-बंद हैं। इनमें जैन-प्रतिमायें खड्गासन व पद्मासनमुद्रा में विराजमान हैं। यहाँ जैनियों के पास जो आगम हैं, वे 'चीन्डी लिपी' में हैं। कोरिया में भी जैनधर्म का प्रचार रहा है। यहाँ 'सांवावारे' जाति के जैनी हैं।

'तातार' देश में 'जैनधर्मसागर नगर' में जैन-मन्दिर 'यातके' तथा 'घघेरवाल' जातियों के जैनी हैं। इनकी प्रतिमाओं का आकार साढ़े तीन गज ऊँचा और डेढ़ गज चौड़ा है।

'मुंगार' देश में जैनधर्म यहाँ 'बाधामा' जाति के जैनी हैं। इस नगर में जैनियों के 8000 घर हैं तथा 2000 बहुत सुंदर जैन-मन्दिर हैं।

तिब्बत और जैनधर्म :-

तिब्बत में जैनी 'आवरे' जाति के हैं। एरूल नगर में एक नदी के किनारे बीस हजार जैन-मन्दिर हैं। तिब्बत में सोहना-जाति के जैन भी हैं। खिलवन नगर में 104 शिखर-बंद जैन-मन्दिर हैं। वे सब मन्दिर रत्न-जटित और मनोरम हैं। यहाँ के वनों में तीस हजार जैन-मन्दिर हैं।

दक्षिण तिब्बत के हनुवर देश मं दस-पन्द्रह कोस पर जैनियों के अनेक नगर हैं, जिनमें बहुत-से जैन-मन्दिर हैं। हनुवर देश के राजा-प्रजा सब जैनी हैं।

युनान और भारत में समुद्री सम्पर्क था। यूनानी लेखकों के अनुसार जब सिकन्दर भारत से यूनान लौटा था, तब तक्षशिला के एक जैन-मुनि 'कोलानस' या 'कल्याण-मुनि' उनके साथ यूनान गये और अनेक वर्षों तक वे एथेन्स नगर में रहे। उन्होंने एथेन्स में सल्लेखना ली। उनका समाधि-स्थान यहीं पर है।

जापान और जैनधर्म :-

जापान में भी प्राचीनकाल में जैन-संस्कृति का व्यापक प्रचार था तथा स्थान-स्थान पर श्रमण-संघ स्थापित थे। उनका भारत के साथ निरंतर सम्पर्क बना रहता था। बाद में भारत से सम्पर्क दूर हो जाने पर इन जैन-श्रमण साधुओं ने बौद्धधर्म से सम्बन्ध स्थापित कर लिया। चीन और जापान में ये लोग आज भी जैन-बौद्ध कहलाते हैं।

मध्य एशिया और दक्षिण एशिया-लेनिनग्राड स्थित पुरातत्त्व-संस्थान के प्रोफेसर 'यूरि जेडनेयोहस्की' ने 20 जून सन् 1967 को नई दिल्ली में एक पत्रकार-सम्मेलन में कहा था कि "भारत और मध्य एशिया के बीच सम्बन्ध लगभग एक लाख वर्ष पुराने हैं। अत: यह स्वाभाविक है कि जैन धर्म मध्य एशिया में फैला हुआ है।"

प्रसिद्ध फ्रांसीसी इतिहासवेत्ता श्री जे.ए. दुबे ने लिखा है कि आक्सियाना, कैस्मिया, बल्ख और समरकंद नगर जैनधर्म के आरम्भिक केन्द्र थे। सोवियत आर्मीनिया में नेशवनी नामक प्राचीन नगर है। प्रोफेसर एम.एस. रामस्वामी आयंगर के अनुसार जैन-मुनि-संत ग्रीस, रोम, नार्वे में भी विहार करते थे। श्री जान लिंगटन आर्किटेक्ट एवं लेखक नार्वे के अनुसार नार्वे म्यूजियम में ऋषभदेव की मूर्तियाँ हैं। वे नग्न और खड्गासन हैं। तर्जिकिस्तान में सराज्य के पुरातात्विक उत्खनन में पंचमार्क सिक्कों तथा सीलों पर नग्न मुद्रायें बनी हैं, जो कि सिंधु-घाटी सभ्यता के सदृश हैं। हंगरी के 'बुडापेस्ट' नगर में ऋषभदेव महावीर की मूर्ति एवं भगवान महावीर की मूर्ति भू-गर्भ से मिली है।

ईसा से पूर्व ईराक, ईरान और फिलिस्तीन में जैन-मुनि ओर बौद्ध-भिक्षु हजारों की संख्या में चहुँओर फैले हुये थे, पश्चिमी एशिया, मिर, यूनान और इथियोपिया के पहाड़ों और जंगलों में उन दिनों अगणित श्रमण-साधु रहते थे, जो अपने त्याग और विद्या के लिये प्रसिद्ध थे। ये साधु नग्न थे। वानक्रेपर के अनुसार मध्य-पूर्व में प्रचलित समानिया- सम्प्रदाय 'श्रमण' का अपभ्रंश है। यूनानी लेखक मिस्र एचीसीनिया और इथियोपिया में दिगम्बर-मुनियों का अस्तित्व बताते हैं।

प्रसिद्ध इतिहास-लेखक मेजर जनरल जे.जी.आर-फर्लांग ने लिखा है कि अरस्तू ने ईस्वी सन् से 330

वर्ष पहले कहा है कि प्राचीन यहूदी वास्तव में भारतीय इक्ष्वाकु-वंशी जैन थे जो जुदिया में रहने के कारण 'यहूदी' कहलाने लगे थे। इस प्रकार यहूदीधर्म का श्रोत भी जैनधर्म प्रतीत होता है। इतिहासकारों के अनुसार तुर्कीसतान में भारतीय-सभ्यता के अनेकानेक चिह्न मिले हैं। इस्तानबुल नगर से 570 कोस की दूरी पर स्थित तारा तम्बोल नामक विशाल व्यापारिक नगर में, बड़े बड़े विशाल जैन मन्दिर, उपाश्रय, लाखों की संख्या में जैन-धर्मानुयायी, चतुर्विध-संघ तथा संघपति-जैनाचार्य अपने शिष्यों-प्रशिष्यों के मुनि-सम्प्रदाय के साथ विद्यमान थे। आचार्य का नाम उदयप्रभ सूरि था। वहाँ का राजा और सारी प्रजा जैन-धर्मानुयायी थी।

प्रसिद्ध जर्मन-विद्वान् वानक्रूर के अनुसार मध्य-पूर्व-एशिया में प्रचलित समानिया-सम्प्रदाय श्रमण-जैन-सम्प्रदाय था। विद्वान् जी.एफ. कार ने लिखा है कि ईसा की जन्मशती के पूर्व मध्य एशिया ईराक, डबरान और फिलिस्तीन, तुर्कीस्तान आदि में जैन-मुनि हजारों की संख्या में फैलकर अहिंसाधर्म का प्रचार करते रहे। पश्चिमी एशिया, मिस्र, यूनान और इथियोपिया के जंगलों में अगणित जैन-साधु रहते थे।

मिस्र के दक्षिण भाग के भू-भाग को राक्षस्तान कहते हैं। इन राक्षसों को जैन-पुराणों में विद्याधर कहा गया है। ये जैनधर्म के अनुयायी थे। उस समय यह भू-भाग सूडान, एबीसिनिया ओर इथियोपियो कहलाता था। यह सारा क्षेत्र जैनधर्म का क्षेत्र था।

मिस्र (एजिप्ट) की प्राचीन राजधानी पैविक्स एवं मिस्र की विशिष्ट पहाड़ी पर मुसाफिर लेखराम ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'कुलपति आर्य मुसाफिर' में इस बात की पुष्टि की है कि उसने वहाँ ऐसी मूर्तियाँ देखी है, जो जैन-तीर्थ गिरनार की मूर्तियों से मिलती-जुलती हैं।

प्राचीन से ही भारतीय, मिश्र, मध्य एशिया, यूनान आदि देशों से व्यापार करते थे तथा अपना व्यापार के प्रसंग में वे उन देशों में जाकर बस गये थे। बोलान में अनेक जैन-मन्दिरों का निर्माण हुआ। पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्त (उच्चनगर) में भी जैनधर्म का बड़ा प्रभाव था। उच्चनगर का जैनों से अतिप्राचीनकाल से सम्बन्ध चला आ रहा है तथा तक्षशिला के समान ही वह भी जैनों का केन्द्र स्थल रहा है। तक्षशिला, पुण्डवर्धन, उच्चनगर आदि प्राचीनकाल में बड़े ही महत्त्वपूर्ण नगर रहे हैं। इन अतिप्राचीन नगरों में भगवान ऋषभदेव के काल से ही हजारों की संख्या में जैन-परिवार आबाद थे। घोलक के वीर धवल के महामंत्री 'वस्तुपाल' ने विक्रम सं. 1275 से 1303 तक जैनधर्म के व्यापक प्रसार के लिये योगदान किया था। इन लोगों ने भारत और बाहर के विभिन्न पर्व-शिखरों पर सुंदर जैन-मन्दिरों का निर्माण कराया और उनका जीर्णोद्धार कराया एवं सिंध (पाकिस्तान), पंजाब, मुल्तान, गांधार, कश्मीर, सिंधु-सोवीर आदि जनपदों में उन्होंने जैनधर्म यह पेशावर से उत्तर की ओर स्थित था। यहाँ पर जैनधर्म की महती-प्रभावना और जनपद में विहार करनेवाले श्रमण-संघ कम्बोज, याकम्बेडिग-गच्छ के नाम से प्रसिद्ध थे। गंधारगच्छ और कम्बोजा-गच्छ सातवीं शताब्दी तक विद्यमान थे। तक्षशिला के उजड़ जाने के समय तक्षशिला में बहुत जैन-मन्दिर और स्तूप विद्यमान थे।

अरबिया में जैनधर्म इस्लाम के फैलने पर अरबिया-स्थिति आदिनाथ, नेमिनाथ और बाहुबलि के मन्दिर और अनेक मूर्तियाँ नष्ट हो गई थी। अरबिया-स्थित 'पोदनपुर' जैनधर्म का गढ़ था और वहाँ की राजधानी थी तथा वहाँ बाहुबलि की उत्तुंग प्रतिमा विद्यमान थी।

ऋषभदेव को अरबिया में 'बाबा आदम' कहा जाता है। मौर्य-सम्राट सम्प्रति के शासनकाल में वहाँ और

फारस में जैन-संस्कृति का व्यापक प्रचार हुआ था, तथा वहाँ अनेक बस्तियाँ विद्यमान थीं।

मक्का में इस्लाम की स्थापना के पूर्व वहाँ जैनधर्म का व्यापक प्रचार-प्रसार था। वहाँ पर अनेक जैन-मन्दिर विद्यमान थे। इस्लाम का प्रचार होने पर जैन-मूर्तियाँ तोड़ दी गई और मन्दिरों को मस्जिद बना दिया गया। इस समय वहाँ जो मस्जिदें हैं, उनकी बनावट जैन-मन्दिरों के अनुरूप है इस बात की पुष्टि जैम्सफर्ग्यूसन ने अपनी 'विश्व की दृष्टि' नामक प्रसिद्ध पुस्तक के पृष्ठ 26 पर की है। मध्यकाल में भी जैन-दार्शनिकों के अनेक संघ बगदाद और मध्य एशिया गये थे और वहाँ पर अंहिसाधर्म प्रचार किया था।

यूनानियों के धार्मिक इतिहास से भी ज्ञात होता है कि उनके देश में जैन-सिद्धांत प्रचलित थे। पाइथागोरस, पायरों, प्लोटीन आदि महापुरुष श्रमणधर्म और श्रमण-दर्शन के मुख्य प्रतिपादक थे। एथेन्स में दिगम्बर जैन-संत श्रमणचार्य का चैत्य विद्यमान है, जिससे प्रकट है कि यूनान में जैनधर्म का व्यापक प्रसार था। प्रोफेसर रामस्वामी ने कहा है कि बौद्ध और जैन-श्रमण अपने-अपने धर्मों के प्रचारार्थ यूनान-रोमानिया और नार्वे तक गये थे। नार्वे के अनेक परिवार आज भी जैनधर्म का पालन करते हैं। आस्ट्रिया और हंगरी में भूकम्प के कारण भूमि में से बुडापेस्ट नगर के एक बगीचे से महावीर स्वामी की एक प्राचीन मूर्ति हस्तगत हुई थी। अत: यह स्वत: सिद्ध है कि वहाँ जैन-श्रावकों की अच्छी बस्ती थी।

सीरिया में निर्जनवासी श्रमण-संन्यासियों के संघ और आश्रम स्थापित थे। ईसा ने भी भारत आकर सन्यास और जैन तथा भारतीय दर्शनों का अध्ययन किया था। ईसा मसीह ने बाइबिल में जो अहिंसा का उपदेश दिया था, वह जैन-संस्कृति और जैन-सिद्धान्त के अनुरूप है।

स्केडिनेविया में जैनधर्म के बारे में कर्नलटाड अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'राजस्थान' में लिखते हैं कि "मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीनकाल में चार बुद्ध या मेधावी महापुरुष हुये हैं। इनमें पहले आदिनाथ और दूसरे नेमिनाथ थे। ये नेमिनाथ की स्केडिनेविया निवासियों के प्रथम औडन तथा चीनियों के प्रथम 'फे' नामक देवता थे। डॉ. प्राणनाथ विद्यालंकार के अनुसार सुमेर जाति में उत्पन्न बाबुल के सिल्दियन सम्राट् नेबुचंद नेजर ने द्वारका जाकर ईसा-पूर्व 1140 के लगभग नेमिनाथ का एक मन्दिर बनवाया था। सौराष्ट्र में इसी सम्राट नेबुचंद नेजन का एक ताम्र-पत्र प्राप्त हुआ है।"

केशिपया में जैनधर्म मध्य एशिया के बलख क्रिया मिशी, माकेश्मिया, उसके बाद मासवों नगरों अमन, समरकन्द आदि में जैनधर्म प्रचलित था, इसका उल्लेख ईसापूर्व पाँचवीं, छठी शती के यूनानी इतिहास में किया गया था। अत: यह बिल्कुल संभव है कि जैनधर्म का प्रचार कैरिपया, रूकाबिया और समरकन्द बोक आदि नगरों में रहा था।

ब्रह्मदेश (बर्मा) में जैनधर्म :-

शस्त्रों में ब्रह्मदेश को स्वर्णदीप कहा गया है। जनमत प्रसिद्ध जैनाचार्य कालकाचार्य और उनके शिष्य गया स्वर्णद्वीप में निवास करते थे, वहाँ से उन्होंने आस-पास के दक्षिण-पूर्व एशिया के अनेक देशों में जैनधर्म का प्रचार किया था। थाइलैण्ड-स्थित नागबुद्ध की नागफणवाली प्रतिमायें पार्श्वनाथ की प्रतिमायें हैं।

श्रीलंका में जैनधर्म :-

भारत और लंका (सिंहलद्वीप) के युगों पुराने सांस्कृतिक सम्बन्ध रहे हैं। सिंहलद्वीप में प्राचीनकाल में

जैनधर्म का प्रचार था। मन्दिर, मठ, स्मारक विद्यमान थे, जो बाद में बौद्ध संघाराम बना लिये गये।

सम्पूर्ण सिंहलद्वीप के जन-जीवन पर जैन संस्कृति की स्पष्ट छाप दृष्टिगोचर होती है। जैन-मुनि यश:कीर्ति ने ईसाकाल की आरम्भिक शताब्दियों में सिंहलद्वीप जाकर जैनधर्म का प्रचार किया था। श्रीलंका में जैन-श्रावकों और साधुओं ने स्थान-स्थान पर चौबीसों जैन-तीर्थंकरों के भव्य मंदिर बनवाये। सुप्रसिद्ध पुरातत्त्वविद् फर्ग्यूसन ने लिखा है कि कुछ यूरोपियन लोगों ने श्रीलंका में सात और तीन फणों वाली मूर्तियों के चित्र लिये। ये सातयानों फण पार्श्वनाथ की मूर्तियों पर और तीन फण उनके शासनदेव धरणेन्द्र और शासनदेवी पद्मावती की मूर्ति पर बनाये जाते हैं। भारत के सुप्रसिद्ध इतिहासवेत्ता श्री पी.सी. राय चौधरी ने श्रीलंका में जैनधर्म के विषय में विस्तार से शोध-खोज की है।

तिब्बत देश में जैनधर्म :-

तिब्बत के हिमिन-मठ में रूसी पर्यटक नोटोबिच ने पालीभाषा का एक ग्रंथ प्राप्त किया था, उसमें स्पष्ट लिखा है कि ''ईसा ने भारत तथा मौर्य देश जाकर वहाँ अज्ञातवास किया था और वहाँ उन्होंने जैन-साधुओं के साथ साक्षात्कार किया था।'' हिमालय-क्षेत्र में निर्वासित वर्तमान हिमरी जाति के पूर्वज तथा गढ़वाल और तराई के क्षेत्र में पूर्वज जैन 'हिमरी' शब्द 'दिगम्बरी' शब्द का अपभ्रंशरूप है, जैन-तीर्थ अष्टापद (कैलाश पर्वत) हिम-प्रदेश के नाम से विख्यात है, जो हिमालय-पर्वत के बीच शिखरमाला में स्थित है और तिब्बत में है, जहाँ आदिनाथ भगवान् की निर्वाण-भूमि है।

अफगानिस्तान में जैनधर्म :-

अफगानिस्तान प्राचीनकाल में भारत का भाग था तथा अफगानिस्तान में सर्वत्र जैन-साधु निवास करते थे। भारत सरकार के पुरातत्व विभाग के भूतपूर्व संयुक्त महानिदेशक श्री टी.एन. रामचन्द्रन ने अफगानिस्तान गये एक शिष्टमंडल के नेता के रूप में, यह मत व्यक्त किया था कि ''मैंने ई. छठी, सातवीं शताब्दी के प्रसिद्ध चीनी-यात्री ह्वेनसांग के इस कथन का सत्यापन किया है कि यहाँ जैन-तीर्थंकरों के अनुयायी बड़ी संख्या में है। उस समय एलेग्जेन्ड्रा में जैनधर्म और बौद्ध धर्म का व्यापक प्रचार था।''

चीनी-यात्री ह्वेनसांग 686-712 ईस्वी के यात्रा के विवरण के अनुसार कपिश देश में 10 जैन-मन्दिर हैं। यहाँ निर्ग्रन्थ जैन-मुनि भी धर्म-प्रचारार्थ विहार करते हैं। 'काबुल' में भी जैनधर्म का प्रसार था। वहाँ जैन-प्रतिमायें उत्खनन में निकलती रहती है।

हिन्देशिया, जावा, मलाया, कम्बोडिया आदि देशों में जैनधर्म :-

इन द्वीपों के सांस्कृतिक इतिहास और विकास में भारतीयों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। इन द्वीपों के प्रारम्भिक अप्रवासियों का अधिपति सुप्रसिद्ध जैन-महापुरुष 'कौटिल्य' था, जिसका कि जैनधर्म-कथाओं में विस्तार से उल्लेख हुआ है। इन द्वीपों के भारतीय आदिवासी विशुद्ध शाकाहारी थे। उन देशों से प्राप्त मूर्तियाँ तीर्थंकर-मूर्तियों से मिलती-जुलती है। यहाँ पर चैत्यालय भी मिलते हैं, जिनका जैन-परम्परा में बड़ा महत्व है।

नेपाल देश में जैनधर्म :-

नेपाल का जैनधर्म के साथ प्राचीनकाल से ही बड़ा सम्बन्ध रहा है। आचार्य भद्रबाहु महावीर निर्वाण-संवत 170 में नेपाल गये थे और नेपाल की कन्दराओं में उन्होंने तपस्या की थी, जिससे सम्पूर्ण हिमालय क्षेत्र में

जैनधर्म की बड़ी प्रभावना हुई थी।

नेपाल का प्राचीन इतिहास भी इस बात का साक्षी है। उस क्षेत्र की बद्रीनाथ, केदारनाथ एवं पशुपतिनाथ की मूर्तियाँ जैन मुद्रा 'पद्मासन' में हैं और उन पर ऋषभ-प्रतिमा के अन्य चिन्ह भी विद्यमान हैं। नेपाल के राष्ट्रीय अभिलेखागार में अनेक जैन-ग्रंथ उपलब्ध है तथा पशुपतिनाथ के पवित्र-क्षेत्र में जैन-तीर्थंकरों की अनेक मूर्तियाँ विद्यमान हैं। वर्तमान में संयुक्त जैन-समाज द्वारा नेपाल की राजधानी काठमाण्डू में 'कमलशेश्वरी' नामक स्थान में एक विशाल जैन-मन्दिर का निर्माण किया जा चुका है। वर्तमान नेपाल में लगभग 500 परिवार जैनधर्म को माननेवाले हैं। यहाँ श्री उमेश चन्द जैन एवं श्री अनिल जैन आदि सामाजिक कार्यकर्त्ता हैं।

भूटान देश में जैनधर्म :-

भूटान में जैनधर्म का खूब प्रसार था तथा जैन-मन्दिर और जैन साधु-साध्वियाँ विद्यमान थे। विक्रम संवत् 1806 में दिगम्बर तीर्थयात्री लागचीदास गोलालारे ब्रह्मचारी भूटान देश में जैन-तीर्थयात्रा के लिये गया था, जिसके विस्तृत यात्रा-विवरण (जैन शास्त्र-भण्डार तिजारा राजस्थान) की 108 प्रतियाँ भिन्न-भिन्न जैन शास्त्र-भण्डारों में सुरक्षित हैं।

पाकिस्तान के परवर्ती-क्षेत्रों में जैनधर्म :-

आदिनाथ स्वामी ने भरत को अयोध्या, बाहुबलि को पोदनपुर तथा शेष 98 पुत्रों को अन्य देश प्रदान किये थे। बाहुबलि ने बाद में अपने पुत्र महाबलि को पोदनपुर का राज्य सौंपकर मुनि-दीक्षा ली थी। पोदनपुर वर्तमान पाकिस्तान क्षेत्र में विन्ध्यार्ध पर्वत के निकट सिंधु नदी के सुरम्य एवं रम्यक के देश उत्तरार्ध में था और जैन-संस्कृति का आदित्य जगत-विख्यात विश्व-केन्द्र था। कालान्तर में पोदनपुर अज्ञात कारणों से नष्ट हो गया।

तक्षशिला जनपद में जैनधर्म :-

तक्षशिला अति प्राचीनकाल में शिक्षा का प्रमुख केन्द्र था, तथा जैनधर्म के प्रचार का भी महत्त्वपूर्ण केन्द्र रहा। इस दृष्टि से प्राचीन जैन-परम्परा से यह स्थान तीर्थस्थल-सा हो गया था। सिंहपुर भी प्राचीन जैन-प्रचार केन्द्र के रूप में विख्यात था। सम्राट हर्षवर्धन के काल में चीनी यात्री ह्वेनसांग ने यहाँ की यात्रा की थी, जिससे इस स्थान पर जगह-जगह जैन-श्रमणों का निवास बताया था।

सिंहपुर जैन महातीर्थ :-

यहाँ एक जैन-स्तूप के पास जैन-मन्दिर और शिलालेख थे। यह जैन महातीर्थ 14वीं शताब्दी तक विद्यमान था। इस महाजैन-तीर्थ का विध्वंस सम्भवतः सुल्तान सिकन्दर बुतशिंकन ने किया था। डॉ. बूहलर की प्रेरणा से डॉ. स्टॉइन ने सिंहपुर के जैन-मन्दिरों का पता लगाने पर कटाक्ष से दो मील की दूरी पर स्थित मूर्ति-गाँव में खुदाई से बहुत-सी जैन-मूर्तियाँ और जैन मंदिरों तथा स्तूपों के खण्डहर प्राप्त किये, जो 26 ऊँटों पर लादकर लाहौर लाये गये ओर वहाँ के म्यूजियम में सुरक्षित किये गये।

ब्राह्मीदेवी का मन्दिर-एक जैन महातीर्थ :-

यह स्थान किसी समय श्रमण-संस्कृति का प्रमुख केन्द्र था। इस क्षेत्र में जैन-साधुओं की यह परम्परा एक लम्बे समय से अविच्छिन्न रूप से चली आ रही है। 'कल्पसूत्र' के अनुसार ऋषभदेव की पुत्री 'ब्राह्मी' इस

देश की महाराज्ञी थी, अंत में वह साध्वी-प्रमुख भी बनीं और उसने तप किया।

मो-अन-जो-दड़ो आदि की खुदाइयों में जो अनेकानेक सीलें प्राप्त हुई हैं, उन पर नग्न दिगम्बर मुद्रा में योगी अंकित है। मो-अन-जो-दड़ो, हडप्पा, कालीबंगा आदि 200 से अधिक स्थानों के उत्खनन से जो सीलें, मूर्तियाँ एवं अन्य पुरातात्विक सामग्री प्राप्त हुई है, वह सब शाश्वत जैन-परम्परा की द्योतक है।

कश्यपमेरु (कश्मीर जनपद) में जैनधर्म :-

कवि कल्हणकृत राजतरंगिणी के अनुसार कश्मीर-अफगानिस्तान का राजा सत्यप्रतिज्ञ अशोक जैन था, जिसने और जिसके पुत्रों ने अनेक जैन-मन्दिरों का निर्माण कराया था तथा जैनधर्म का व्यापक प्रचार किया।

हड़प्पा-परिक्षेत्र में जैनधर्म :-

इसके अतिरिक्त सक्खर मो-अन-जो-दड़ो, हड़प्पा, कालीबंगा आदि की खुदाई से भी महत्त्वपूर्ण जैन पुरातत्त्व सामग्री प्राप्त हुई, जिसमें बड़ी संख्या में जैन-मूर्तियाँ, प्राचीन सिक्के, बर्तन आदि विशेष ज्ञातव्य है।

गांधार और पुण्ड जनपद में जैनधर्म :-

सिंधु नदी से काबुल नदी तक का क्षेत्र मुल्तान और पेशावर गांधारमंडल में सम्मिलित थे। पश्चिमी पंजाब और पूर्वी अफगानिस्तान भी इसमें सम्मिलित थे। गांधार जनपद में विहार करने वाले जैन-साधु 'गांधार-गच्छ' के नाम से विख्यात थे। सम्पूर्ण जनपद जैनधर्म बहुल-जनपद था।

बांग्लादेश एवं परवर्ती-क्षेत्रों में जैनधर्म :-

बांग्लादेश और उसके निकटवर्ती पूर्वी-क्षेत्र और कामरूप-जनपद में जैन-संस्कृति का व्यापक प्रचार-प्रसार रहा है, जिसके प्रचुर संकेत सम्पूर्ण वैदिक और परवर्ती साहित्य में उपलब्ध हैं।

आज इस कामरूप प्रदेश में जिसमें बिहार, उडीसा और बंगाल भी आते हैं, सर्वत्र गाँव-गाँव, जिलों-जिलों में प्राचीन सराक जैन-संस्कृति की व्यापक शोध-खोज हो रही है और नये-नये तथ्य उद्घाटित हो रहे हैं।

पहाड़पुर (राजशाही बंगलादेश) में उपलब्ध 478 ईस्वी के ताम्रपत्र के अनुसार पहाड़पुर में एक जैन-मन्दिर था, जिसमें 5000 जैन-मुनि ध्यान-अध्ययन करते थे और जिसके ध्वंसावशेष चारों ओर बिखरे पड़े हैं। 'मौञ्डवर्धन' और उसके समीपस्थ 'कोटिवर्ष' दोनों ही प्राचीनकाल में जैनधर्म के प्रमुख केन्द्र थे। श्रुतकेवली भद्रबाहु और आचार्य अर्हद्‌बलि- दोनों ही आचार्य इसी नगर के निवासी थे। परिणामत: जैनधर्म बंगाल एवं उसके आस-पास के क्षेत्रों में अत्यधिक लोकप्रिय हो गया। सम्भवत: प्रारम्भिककाल में बंगाल में लोकप्रिय बन जाने के कारण ही जैनधर्म इस प्रदेश के समुद्री तटवर्ती भू-भागों से होता हुआ उत्कल प्रदेश के विभिन्न भू-भागों में भी अत्यन्त शीघ्र गति से फैल गया।

विदेशों में जैन-साहित्य और कला सामग्री :-

लंदन स्थित अनेक पुस्तकालयों में भारतीय ग्रंथ विद्यमान हैं, जिनमें से एक पुस्तकालय में तो लगभग 1500 हस्तलिखित भारतीय-ग्रंथ हैं और अधिकतर ग्रंथ प्राकृत, संस्कृत भाषाओं में हैं और जैनधर्म से सम्बन्धित हैं।

जर्मन में भी बर्लिन-स्थित एक पुस्तकालय में बड़ी संख्या में जैन-ग्रंथ विद्यमान हैं, अमेरिका के वाशिंगटन और बोस्टन नगर में 500 से अधिक पुस्तकालय हैं, इनमें से एक पुस्तकालय में 40 लाख

हस्तलिखित पुस्तकें हैं, जिनमें भी 20,000 पुस्तकें प्राकृत, संस्कृत भाषाओं में हैं, जो भारत से गई हुई हैं।

फ्रांस में 1,100 से अधिक बड़े पुस्तकालय हैं, जिनमें पेरिस स्थित बिब्लियोथिक नामक पुस्तकालय में 40 लाख पुस्तकें हैं। उनमें 12 हजार पुस्तकें प्राकृत, संस्कृत भाषा की हैं, जिनमें जैन-ग्रंथों की अच्छी संख्या है।

रूस में एक राष्ट्रीय पुस्तकालय है, जिसमें 5 लाख पुस्तकें हैं। उनमें 22 हजार पुस्तकें प्राकृत, संस्कृत की हैं। इसमें जैन-ग्रंथों की भी बड़ी संख्या है।

इटली के पुस्तकालयों में 60 हजार पुस्तकें तो प्राकृत, संस्कृत की हैं और इसमें जैन-पुस्तकें बड़ी संख्या में हैं।

नेपाल के काठमाण्डू स्थित पुस्तकालय में हजारों की संख्या में जैन प्राकृत और संस्कृत ग्रंथ विद्यमान हैं।

इसी प्रकार चीन, तिब्बत, बर्मा, इंडोनेशिया, जापान, मंगोलिया, कोरिया, तुर्की, ईरान, अल्जीरिया, काबुल आदि के पुस्तकालयों में भी जैन-भारतीय-ग्रंथ बड़ी संख्या में उपलब्ध हैं।

भारत से विदेशों में ग्रंथ ले जाने की प्रवृत्ति केवल अंग्रेजीकाल से ही प्रारम्भ नहीं हुई, अपितु इससे हजारों वर्ष पूर्व भी भारत की इस अमूल्य-निधि को विदेशी लोग अपने-अपने देशों में ले जाते रहे हैं।

वे लोग भारत से कितने ग्रंथ ले गये, उनकी संख्या का सही अनुमान लगाना कठिन है। इसके अतिरिक्त म्लेच्छों, आततायियों, धर्मद्वेषियों ने हजारों, लाखों की संख्या में हमारे साहित्य-रत्नों को जला दिया।

इसीप्रकार जैन-मंदिरों, मूर्तियों, स्मारकों, स्तूपों आदि पर भी अत्यधिक अत्याचार हुये हैं। बड़े-बड़े जैन तीर्थ, मन्दिर, स्मारक आदि मूर्ति-भंजकों ने धाराशायी किये। अफगानिस्तान, काश्यपक्षेत्र, सिंधु, सोवीर, बलूचिस्तान, बेबिलोन, सुमेरिया, पंजाब, तक्षशिला तथा कामरूप-प्रदेश बांग्लादेश आदि प्राचीन जैन-संस्कृति-बहुल क्षेत्रों में यह विनाशलीला चलती रही। अनेक जैन-मन्दिरों को हिन्दू और बौद्ध मन्दिरों में परिवर्तित कर लिया गया या उनमें मस्जिदें बना ली गईं। अनेक जैन-मन्दिर, मूर्तियाँ आदि अन्य धर्मियों के हाथों में चले जाने से अथवा अन्य देवी-देवताओं के रूप में पूजे जाने से जैन-इतिहास और पुरातत्व एवं कला-सामग्री को भरी क्षति पहुँची है।

ओम रिवाल्विंग रेस्टोरेन्ट, एम.आई. रोड, जयपुर

वनेऽपि दोषाः प्रभवन्ति रागीणं, गृहेऽपि पञ्चेन्द्रियः निग्रहस्तपः।
अकुत्सितेकर्मणि यो प्रवर्तते, गृहमरागस्य वनं तपोवनम्॥

-पंचतंत्र

रागियों के वन में भी दोष उत्पन्न हो जाते हैं। घर में भी मनुष्य तप से पञ्चेन्द्रिय निग्रह हो सकता है। सही तो यह है कि जो बुरे कर्म में प्रवृत्त ही नहीं होता है, उसके लिये घर भी वन-तपोवन सा है।

प्रथम चातुर्मास ने पुरवा में इतिहास का रूप लिया

परम पूज्य आचार्य गुरुवर आर्जवसागरजी महाराज का ससंघ पुरवा (जबलपुर) चातुर्मास के दौरान दशलक्षण पर्व के उपरान्त 9 तारीख सितम्बर को गुरुवर ससंघ भेड़ाघाट दर्शनार्थ पहुँचे। वहाँ पर स्थित जिन प्रतिमाओं का दर्शन किया और प्राकृतिक छटा का भी अवलोकन कर तीन दिन के प्रवास के उपरान्त पुनः पुरवा नगर में मंगल प्रवेश हुआ।

पश्चात् 1 अक्टूबर को धार्मिक कवि सम्मेलन हुआ जिसमें करीब 30-40 कवियों ने अपनी स्व-रचित कवितायें सुनायीं। जिसमें बच्चों ने भी बहुत उल्लास के साथ भाग लिया। गुरु महाराज ने भी अपनी कवितायें सुनायीं। तदुपरान्त 2 अक्टूबर को दोपहर में धार्मिक पाठशाला सम्मेलन का कार्यक्रम हुआ। जिसमें 15-16 पाठशालाओं के बच्चों ने आँखों को सजल करने वाली आकर्षक अपनी-अपनी धार्मिक प्रस्तुति दी। पुरवा जबलपुर वालों को यह कार्यक्रम पहली बार देखने को मिला। बच्चों के शिक्षाप्रद कार्यक्रमों को देखकर बड़े लोगों के मन को मोहितकर लिया। इसमें प्रथम पुरस्कार पुरवा पाठशाला को द्वितीय पुरस्कार शिव नगर (जबलपुर) पाठशाला को, तृतीय पुरस्कार संगम कालोनी (जबलपुर) पाठशाला को प्राप्त हुआ।

पश्चात् दिनांक 8 अक्टूबर को ऐलक श्री भगवतसागरजी को जैनेश्वरी दीक्षा प्राप्त करने का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। जिसमें दोपहर में एक बजे गुरुवर आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज ससंघ जिनमन्दिर पहुँचे। पश्चात् वहाँ से बाजे के साथ नये पिच्छि, कमण्डल के साथ गुरुवर ने जिनदीक्षा की क्रियायें प्रारम्भ की। गुरुवर के कर कमलों से केशलोंच क्रिया एवं शुद्ध मंत्रोच्चारण के साथ जिनदीक्षा प्रदान की गयी। ज्यों ही वस्त्रों को त्याग कर दिगम्बर बने त्यों ही जय-जयकार गूंज उठी। इस जिनदीक्षा को देखने के लिए भारी जन समूह उमड़ पड़ा। पण्डाल में पग रखने के लिए जगह नहीं थी। जिन दीक्षा के उपरान्त उनका नाम मुनिश्री भास्वतसागरजी रखा गया एवं उनको नई पिच्छिका प्रदान की गई एवं कोल्हापुर वालों की ओर से नया कमण्डल एवं शास्त्र भेंट किया गया। इस प्रकार यह जिन दीक्षा समारोह विशाल जन समुदाय के बीच बहुत ही हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न हुआ।

पश्चात् अक्टूबर 19 तारीख को भगवान महावीर का निर्वाण कल्याणक बहुत ही उत्साह के साथ किड्स केम्प स्कूल के पाण्डाल में संगीतमय पूजन के माध्यम से निर्वाण लाडू चढ़ाकर मनाया गया एवं वर्षायोग का निष्ठापन रूप भक्तियाँ पढ़ी गईं। तदुपरान्त गुरुवर का मंगल प्रवचन हुआ।

दिनांक 22 अक्टूबर को भक्तामर मण्डल द्वारा भक्तामर महामण्डल विधान सम्पन्न किया गया और इसी दिन 28 अक्टूबर से 5 नवम्बर तक होने वाले श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान हेतु पात्र चयन का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

तदुपरान्त 28 अक्टूबर से श्री सिद्धचक्र महा मण्डल विधान गुरुवर के ससंघ सान्निध्य में एवं सुंदर समवसरण के साथ विशाल मांडना माड़कर किया गया। जिसमें पहले दिन घट यात्रा, देव आज्ञा, गुरु आज्ञा के साथ जिन प्रतिमायें मन्दिर में पण्डाल तक बाजे के साथ ले गये। वहाँ समवसरण में प्रतिमाओं को विराजमान किया। पश्चात् ध्वजारोहण, गुरुवर के प्रवचनादि कार्यक्रम सम्पन्न हुये। प्रतिदिन सिद्ध प्रभु की महा आराधना

और गुरुवर की प्रवचन माला जैन रामायण के साथ चलती रही।

अन्तिम दिन 5 नवम्बर को प्रातः हवन के पश्चात् विशाल रथोत्सव किया गया। जिसमें गुरुवर के ससंघ सान्निध्य में रथ में प्रभुजी को विराजमान करते हुए गाजे-बाजे के साथ, विशाल जनसमूह के जय-जयकारों के साथ नृत्यगान करते हुये नई पिच्छिकाएँ लेते हुए यह रथोत्सव त्रिपुरी चौक, मढ़ियाजी से होते हुए स्कूल (प्रभावना स्थली) तक पहुँचा और अभिषेक, सम्मान व आशीर्वचन के साथ यह कार्यक्रम सानन्द सम्पन्न हुआ।

दोपहर में पिच्छिका परिवर्तन का कार्यक्रम भी बहुत ही मंगलमय हुआ। जिसमें पुरवा पाठशाला के बच्चों द्वारा मंगलाचरण हुआ। पश्चात् चित्र अनावरण एवं दीप प्रज्ज्वलन किया गया। तदुपरान्त कण्ठपाठ प्रतियोगिता में उत्तीर्ण हुए लोगों को पुरस्कार वितरण किये गये। पश्चात् बाहर से पधारे दिल्ली, गुजरात, तमिलनाडु कर्नाटक, उड़ीसा, भोपाल, इन्दौर, सागर, दमोह, बीड, बरेली आदि स्थानों में पधारे अतिथियों का सम्मान किया गया। पश्चात् पिच्छिका परिवर्तन हुआ। जिसमें आचार्य गुरुवर की पिच्छि देने का सौभाग्य श्रीमति कमलेश सुभाष जैन परिवार एवं श्रीमति रजनी जैन आदि को प्राप्त हुआ और पुरानी पिच्छि लेने का सौभाग्य श्री रवि जैन, प्रीती जैन परिवार को प्राप्त हुआ। संघस्थ मुनिराजों एवं आर्यिकाओं के भी क्रम से पिच्छिका परिवर्तन हुआ। अन्त में गुरुवर ने मंगल प्रवचन में संयम का महत्त्व बताते हुए विजय, विजया का उदाहरण दिया। इस प्रकार यह पुरवा (जबलपुर) को आचार्य संघ का चातुर्मास प्रथम बार मिलने पर ऐतिहासिक रूप कार्यक्रमों का संगम हुआ।

पश्चात् 6 तारीख दोपहर को गुरुवर का ससंघ विहार संगम कॉलोनी की ओर हुआ। सब लोगों का शीतकाल का आग्रह होते हुए भी गुरुवर को रोक नहीं पाये। गुरुवर के साथ अश्रुपात करते हुए पीछे-पीछे सारी जनता चलती चली गई। संगम कॉलोनी में मंगल आगवानी हुयी। दो दिन के प्रवास में मंगल प्रवचन के माध्यम से धर्म की प्रभावना हुई। पश्चात् 8 तारीख दोपहर को पनागर के लिए विहार हो गया। शाम को सुभाष नगर पर विश्राम करते हुए 9 तारीख प्रातः काल पनागर नगर में मंगल प्रवेश हुआ। बाजार मन्दिर में आहार चर्या के उपरान्त अतिशय क्षेत्र के मन्दिर का दर्शन किया।

विशाल शान्तिनाथ प्रभु का दर्शन कर सभी आनन्दित हुये। गुरुवर को अपने संयम (ब्रह्मचर्य) रूप धारण की स्थली को देखकर पुराने संस्मरण याद आ गये। सबको सुनाया कि मैंने यहीं पर ब्रह्मचर्य व्रत लिया और सफेद कपड़े यहीं पर धारण किये थे। सभी लोग सुनकर हर्षित हुये। कुछ दिनों के प्रवास पर प्रतिदिन मंगल प्रवचन हुये। शीतकाल के लिए कमेटी के द्वारा श्रीफल भेंट किये। पश्चात् 15 तारीख शाम को गुरुवर का विहार हो गया। विहार करके सम्मेदगिरि का दर्शन करते हुए गोसलपुर में मन्दिर दर्शन कर आहार चर्या हुई। पश्चात् दोपहर में गुरुवर के मंगल प्रवचन हुये। सबने कुछ दिन प्रवास के लिए नम्र निवेदन किया। फिर भी गुरुवर का विहार हो गया। विहार करके खितौला में मंगल प्रवेश हुआ। पश्चात् खितौला में मंगलप्रवचन हुये तथा वहाँ भी शीतकाल के लिए निवेदन किया। फिर भी गुरुवर 18 तारीख को वहाँ से बहोरीबंद के लिए विहार कर दिया। 19 तारीख शाम को बहोरीबंद में बाजों के साथ भव्य मंगल प्रवेश हुआ और भगवान शान्तिनाथ की

विशाल प्रतिमा को देखकर मन प्रफुल्लित हो गया। यहाँ तक पुरवा वाले बड़ी संख्या में विहार में साथ चल रहे थे। बस भरकर आये थे और बहोरीबंद के बीच चौका भी लगाकर आहार दान का लाभ लिया तथा बहोरीबंद तक पैदल विहार कराकर सातिशय पुण्य का संचय किया। 21 नवम्बर को क्षेत्र पर पधारे लघु व मध्यम उद्योगमंत्री संजय पाठक म.प्र. शासन ने तथा कटनी नगर के महापौर शशांक श्रीवास्तव आदि ने आचार्य श्री आर्जवसागरजी ससंघ का दर्शन कर आशीष प्राप्त किया। 22 नवम्बर को मध्याह्न 2 बजे क्षेत्र कमेटी के निवेदन से गुरुवर आचार्यश्री के सान्निध्य में आचार्यश्री विद्यासागर महाराज का आचार्य पदारोहण दिवस सोल्लास मनाया गया। इस कार्यक्रम में बहोरीबंद की जैनसमाज के साथ सिहोरा, स्लीमनाबाद, तेवरी, कटनी, जबलपुर, दमोह से पधारे लोगों के साथ बाकल समाज के साथ आए अजय अहिंसा ने कविता सुनाकर सबका मन मोहा एवं संचालन खितौला समाज के साथ आए मनोज जैन ने किया। बहोरीबंद अतिशय क्षेत्र कमेटी द्वारा आचार्यश्री ससंघ के लिए शीतकालीन प्रवास तथा 26 दिसंबर में आने वाले मेले में आचार्यश्री का सान्निध्य प्राप्त करने हेतु श्रीफल भेंटकर निवेदन किया। 24 नवम्बर को आचार्यश्री का ससंघ बिहार स्लीमनाबाद की ओर हुआ। स्लीमनाबाद की जैन समाज ने शीतकालीन वाचना हेतु श्रीफल भेंट किया। सभी ने आचार्यश्री के प्रवास हेतु निवेदन किया किन्तु 3 दिसम्बर को ससंघ विहार-तेवरी की ओर हुआ। तेवरी में कुछ दिन प्रवास करने के उपरांत दिनांक 10 दिसम्बर को पिपरौध के लिए विहार हुआ। आहारचर्या के उपरांत निवार (पहाड़ी) की ओर विहार हुआ। यहाँ कुछ दिनों के लिए धर्मप्रभावना हेतु प्रवास हुआ।

★

अभिषेक का जल कैसा हो ?

★ अभिषेक का जल आदर्श कुआँ, बहती नदी या झरने और वर्षात् का विधिवत् संग्रहीत रूप शुद्ध हो।

★ उपरोक्त जल मोटे दुहरे छन्ने से छानकर उसकी जीवानी को जहाँ से जल निकाला था उसी जगह विधिवत् छोड़कर प्रासुक किया गया हो और मर्यादा के भीतर ही उपयोग में लाया जावे।

★ भगवान या दिगम्बर गुरु महाव्रती होते हैं उनकी मानव द्वारा अप्रासुक और अमर्यादित जलादि से वैयावृत्ति आदिक किया जाना अविवेक का परिचायक है। जैन-पद्धति हिन्दू-पद्धति से भिन्न एक उत्कृष्ट अहिंसक पद्धति है।

★ भगवान का अभिषेक करने वाला अशुभ-सप्त व्यसनों का त्यागी, जैनाचार का धारी और कुल परम्परा से शुद्ध होना चाहिए। ऐसे ही कुछ कारणों को ध्यान में रखकर चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री 108 शांतिसागरजी महाराज ने जिनेन्द्र प्रभु, जिनालय और जिनागम की शुद्धि और मर्यादा की रक्षा करने जैन मंदिरों में हरिजन प्रवेश बंद करवाने के लिए बहुत कुछ त्याग किया था और उनके तप के प्रभाव से सरकार ने एक अलग कानून व्यवस्था जैनों के हित में बनायी थी। जो निर्लोभी अहिंसक प्राणियों के लिए आदरणीय व सदा ग्राह्य है और सद्गति का कारण है।

निर्ग्रन्थ उपासक संघ

भाव-विज्ञान जैन धर्म प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता

नियमावली :

१. उत्तर लिखने वाले या उसके पारिवारिक सदस्य की भाव विज्ञान पत्रिका संबंधी आजीवन सदस्यता होनी अनिवार्य है। एक परिवार से एक ही उत्तर पुस्तिका स्वीकार्य होगी । अन्य नहीं।
2. प्रश्न पत्र के पेपर पर ही उत्तर लिखकर भेजें । फोटो कॉपी मान्य नहीं होगी।
3. उत्तर पुस्तिका पर अंक देने का भाव उत्तर पुस्तिका में वर्णित उत्तरों की शुद्धता, लिखावट एवं उम्र पर निर्भर करेगा। अल्प उम्र वाले प्रतियोगी को प्रमुखता दी जावेगी।
4. उत्तर लिखकर काट दिये जाने पर या घिस दिये जाने पर अंक नहीं दिये जावेंगे।
5. उत्तर पुस्तिका की प्रतियोगी को एक फोटोकॉपी करवा लेना चाहिये क्योंकि मुख्य उत्तर पुस्तिका में कोई गलती न हो एवं अगली भाव विज्ञान पत्रिका में आने वाले उत्तरों का प्रतियोगी मिलान कर सके।
6. पत्रिका पहुँचने के पन्द्रह दिनों के भीतर उत्तर अवश्य प्रेषित करें। पत्रिका प्रकाशित होने के एक माह के बाद प्राप्त उत्तर पुस्तिकाएँ प्रतियोगिता हेतु मान्य नहीं की जावेगी।
7. पुरस्कार की राशि मनीआर्डर या बैंक आदि से भेजी जावेगी। प्रतियोगी प्राप्त मूल्य का उपयोग अपने तीर्थ वंदना, पूजा द्रव्य दान, आहार दान, औषधदान, उपकरण दान, पाठशाला की यूनिफार्म आदि धर्म कार्य के द्रव्य में सम्मिलित कर सकते हैं।
8. अगली भाव विज्ञान पत्रिका में सभी श्रेणियों के पुरस्कार विजेताओं के नाम प्रकाशित किये जावेंगे।
9. उत्तर पुस्तिका डाक/पोस्ट से निम्न पते पर प्रेषित की जानी चाहिए।
डॉ. प्रोफेसर सुधीर जैन, ८५, डी.के. कॉटेज, दानापानी रेस्टोरेंट के पास, ई-८ एक्सटेंशन, भोपाल (म.प्र.)

* **उपरोक्त प्रतियोगिता के बारे में हमारा उद्देश्य है कि बाल-युवा पीढ़ी भी स्वाध्याय के क्षेत्र में आगे बढ़े एवं घर-घर में चले धर्म संस्कार की पाठशाला।**

प्रथम पुरस्कार : 108 योग्य संख्यक मूल्य, द्वितीय पुरस्कार: 72 योग्य संख्यक मूल्य
तृतीय पुरस्कार : 57 योग्य संख्यक मूल्य

पुरस्कारों के पुण्यार्जक श्री विनोद कुमार जैन, 591, कंचन विला, कृष्ण विहार, वी.के. कोल नगर, (अजमेर राजस्थान)

उत्तीर्ण प्रतियोगी परिचय

सितम्बर 2017

प्रथम श्रेणी
श्री उत्तम चंद बोहरा
63/122 हीरा पथ मानसरोवर, जयपुर

द्वितीय श्रेणी
श्री हरिश चंद्र छावड़ा
60/57 रजत पथ, मानसरोवर
जयपुर

तृतीय श्रेणी
श्रीमती कमला केशरी चंद जैन
सरकारी नर्सरी के पीछे
नूतन नगर खरगोन (म.प्र.)

उत्तर पुस्तिका सितम्बर 2017

1. सर्वार्थसिद्धि	2. सुदर्शन	3.21,000 वर्ष
4. चौरासी हजार वर्ष	5. ना	6.ना
7. हाँ	8. हाँ	9.मेघ पटल नाश
10. 16 वर्ष	11. कार्तिक शुक्ला 12	

12. भ.अरहनाथ के समवसरण का विस्तार साढ़े तीन योजन था एवं वहाँ पर कुल 50 हजार मुनिराज और 60 हजार आर्यिकाएँ थीं।

13. वैजयन्ती	14. रेवती	15. अपराजित
16. कुंभार्य	17. सही	18. गलत
19. सही	20. सही	

भाव-विज्ञान जैन धर्म प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता

समय : 15 दिन, अंक : 100

- ❖ 20 प्रश्नों में से प्रत्येक प्रश्न पर 5-5 अंक समान हैं।
- ❖ इन प्रश्नों में से एक प्रश्न का उत्तर दो लाइनों में वाक्य सहित लिखना अनिवार्य है।
- ❖ उत्तर राष्ट्रभाषा हिन्दी में लिखें। लिखकर काटे या मिटाए जाने पर अंक नहीं दिए जाएँगे।

सही उत्तर पर (✓) सही का निशान लगावें-

प्र.1. भ.मल्लिनाथ जन्म कहाँ पर हुआ था ?

अयोध्या ( ) मिथिलापुरी ( ) रत्नपुरी ( )

प्र.2. भ.मुनि सुव्रतनाथ की माता का नाम क्या था ?

पद्मावती ( ) प्रभावती ( ) जयादेवी ( )

प्र.3. भ. मुनि सुव्रतनाथ के वैराग्य का कारण क्या था ?

हिमनाश ( ) उल्कापात ( ) जातिस्मरण ( )

प्र.4. भ. मल्लिनाथ ने किस पर्याय में तीर्थंकर प्रकृति का बंध किया था ?

कुम्भ राजा के ( ) नाग राजा के ( ) वैश्रवण राजा के ( )

हाँ या ना में उत्तर दीजिये-

प्र.5. भ. मुनि सुव्रतनाथ के समवसरण में प्रमुख आर्यिका पूर्वदत्ता थी। ( )

प्र.6. भ. मुनि सुव्रतनाथ का जन्म वैशाख कृष्णा दशमी को हुआ था। ( )

प्र.7. भ. अरहनाथ तीर्थंकर के बाद एक हजार करोड़ वर्ष बीत जाने पर भ. मल्लिनाथ हुए थे। ( )

प्र.8. भ. मल्लिनाथ इक्ष्वाकुवंशी थे। ( )

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:-

प्र.9. भ. मल्लिनाथ दीक्षा के लिए .... वन में पहुँचे।

(अशोक वन, श्वेत वन, पाण्डुक वन)

प्र.10. भ. मुनिसुव्रत के समवसरण में .... प्रमुख गणधर थे।

(मल्लिजी, श्री जय, चक्रायुध)

प्र.11. भ.मल्लिनाथ के छद्मस्थ अवस्था का काल .... था।

(6 माह, 6 वर्ष, 6 दिन)

दो पंक्तियों में उत्तर दें:-

प्र.12. भ.मुनि सुव्रतनाथ के काल में हुये बलदेव, कामदेव, नारायण और प्रतिनारायण का नाम बताइए।

....

....

....

सही जोड़ी मिलायें:-

प्र.13. भ. मल्लिनाथ के साथ दीक्षित हुये कुल राजा थे	-	लव, कुश
प्र.14. भ. मुनि सुव्रतनाथ के समवरण में प्रमुख गणधरों की संख्या	-	300
प्र.15. भ. मुनि सुव्रतनाथ के तीर्थ काल में हुए थे	-	40,000
प्र.16. भ. मल्लिनाथ के समवसरण स्थित कुल मुनिराजों की संख्या	-	18

सही (✓) या गलत (×) का चिन्ह बनाइये:-

प्र.17. भ.मल्लिनाथ के काल में सुभौम चक्रवर्ती हुये। ( )

प्र.18. भ. मल्लिनाथ के काल में सातवें नन्दि मित्र बलदेव हुये। ( )

प्र.19. भ. मुनि सुव्रतनाथ को सम्मेदशिखर के निर्जर कूट से मोक्ष हुआ। ( )

प्र.20. भ. कुलभूषण और देशभूषण भ. मुनि सुव्रतनाथ के काल में हुये। ( )

आधार

1. उत्तर पुराण, 2. जैनागम संस्कार

प्रतियोगी-परिचय

भाव विज्ञान सदस्यता की रसीद क्रमांक :

नाम .... **उम्र** ....

पिता/माता/पति का नाम ....

नगर या गाँव का नाम ....

पता..

....

मोबाईल/फोन नं. ....

सदस्यों को भाव विज्ञान प्रेषित करते समय लिफाफे के पते पर रसीद क्रमांक का लेख भी किया जाता है।

भाव विज्ञान परिवार

❄❄❄❄❄ शिरोमणी संरक्षक ❄❄❄❄❄

मेसर्स आर.के. ग्रुप, मदनगंज-किशनगढ़, अजमेर, ● श्री जैन निर्मल कुमार झांझरी, डीमापुर (नागालैंड)।

❄❄❄❄ परम संरक्षक ❄❄❄❄

● श्री जैन गौतम काला, राँची ● श्री बुधराज जैन कासलीवाल, पांडीचेरी।

❄❄❄ पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक ❄❄❄

● प्रबंधकारिणी समिति, श्री १००८ पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, कीर्तिनगर, जयपुर ● सकल दिगम्बर जैन समाज, दाँतारामगढ़, जिला सीकर ● श्री कुन्थीलाल रमेशचंद नरेश कुमार जैन गदिया, नसीराबाद (अजमेर) ● **रामगंजमण्डी** : सकल दिगम्बर जैन समाज एवं वर्षायोग समिति 2011, श्री जैन ताराचंद मित्तल परिवार एवं महेशकुमार अशोक कुमार महेन्द्र कुमार जैन ठोरा।

❄❄ पुण्यार्जक संरक्षक ❄❄

● श्री जैन नीरज सुपुत्र श्रीमती चन्द्रकला पाटनी, रांची ● सुशील कुमार, अभिषेक रोहित कुमार जैन, पांडीचेरी ● श्री मिट्ठनलाल जैन, नई दिल्ली।

❄ सम्मानीय संरक्षक ❄

● श्री वर्धमान विक्रमादित्य जैन, गोवा ● श्री जैन पदमराज होळल, दावणगेरे ● श्री जैन सोहनलाल कासलीवाल, सेलम ● श्री जैन संजय सोगानी, राँची ● श्री जैन आकाश टोंग्या, भोपाल ● श्री महावीरप्रसाद संजयकुमार जैन, इस्पात एंटरप्राईजेस प्रा.लि., कलकत्ता ● श्रीमती जैन संगीता हरीश बजाज, टीकमगढ़ ● श्रीमती कमलाबाई अशोक जैन साहबजाज, अजमेर ● श्री जैन बी.एल. पचन्ना, बैंग्लुरू ● श्री घनश्याम जैन, कृष्णा नगर, दिल्ली ● **जयपुर** : श्री जैन कमलजी काला, कु. इन्द्रसेना जैन, ● **सूरत** : श्री नरेश जैन, (दिल्ली वाले), श्री जैन निलेशभाई शाह।

❄ संरक्षक ❄

● श्री जैन विजय अजमेरा, रीवा ● श्री के. सी. जैन, डि. एक्साइज अधिकारी, छतरपुर ● श्री अजित प्रसाद जैन सराफ, रेवाड़ी ● **दिल्ली** : श्री विजयपाल जैन, शाहदरा, श्री राकेश जैन, रोहिणी ● श्री दिगम्बर जैन तीर्थ बड़ा मंदिर, हस्तिनापुर (मेरठ) ● श्री संजय जैन, गुड़गांव ● श्रीमती सुषमा रवीन्द्र कुमार जैन, गाजियाबाद ● श्री जैन कल्याणमल झांझरी, कलकत्ता ● **भोपाल**: श्रीमती सुधा महेन्द्र कुमार जैन, श्री प्रेमचंद जैन ● श्री कस्तूरचंद सुरेश कुमार जैन, रामगंज मण्डी, कोटा ● श्रीमती जैन हीरामणी चांदमल सेठी, गुवाहाटी ● श्री जैन विमलचंद मोहित कुमार ठोलिया, पांडीचेरी ● श्रीमति विमला मनोहर जैन, सूरत ● **जयपुर** : श्री एस.एल. जैन (बागड़िया), श्री जैन गुणसागर ठोलिया-किशनगढ़-रेनवाल, श्री जैन श्रेयांस कुमार पाटोदी, श्रीमती जैन अनिता पारस सौगानी, श्री जैन जितेन्द्र अजमेरा, श्री जैन ओम कासलीवाल, श्री जैन मंगलचंद हरकचंद मोतीलाल कमलचंद छाबड़ा, श्री विजय कुमार जैन छाबड़ा ● **उदयपुर** : श्री प्रकाशचंद जैन, श्रीमती निधी राहुल जैन-अनुपम ग्रुप ऑफ कम्पनीज, श्री जैन अशोक कुमार ड्वारा ● **इंदौर** : श्री सचिन जैन, स्मृति नगर ● **पथरिया (दमोह)** : श्री मुकेशकुमार जैन, जैन साईकल मार्ट।

❄ विशेष सदस्य ❄

● **दमोह** : श्री मनोज जैन दाल मिल, ● **अजमेर** : श्री भागचन्द जैन, नसीराबाद ● **सूरत** : श्री जैन हर्षद भाई मेहता, श्री जैन अरविंद भाई गांधी, श्री जैन संयम संदीप भाई शाह, श्री जैन रमेश मोहनलाल दौसी, श्री जैन कोठारी बाबूलाल कचरालाल, श्री जैन कन्हैयालाल कचरालाल मेहता, श्री जैन कमलेश शाह, श्री जैन हसमुख मगनलाल शाह, श्री जैन चम्पालाल लक्ष्मीलाल सिंघवी, श्री जैन नीलकेष बालू शाह मढ़ी, श्रीमती जैन सुनिता विद्या प्रकाश दीवान, श्री जैन अशोक कुमार गंगवाल खाच्छरियावास, श्रीमती जैन गुणमाला देवी दीपचंद सेठी ● **भोपाल**: श्री राजकुमार जैन।

❄ नवागत सदस्य ❄

● **दिल्ली** : श्री धीरेन्द्र कुमार

भाव विज्ञान पत्रिका की सदस्यता हेतु आवेदन-पत्र

मैं .... मधु (शहद), मांस, मद्य (नशा) का त्यागी, धर्म का अनुसरण करने वाला पिता/पति श्री ....

जिला .... प्रदेश ....से

भाव विज्ञान पत्रिका पुर्ण्याजक विशेषांक संरक्षक सदस्य रूपये 24500/- ☐ परम संरक्षक रुपये 21000/- ☐ पुण्यार्जक संरक्षक सदस्य रुपये 18,000/- ☐ सम्मानीय संरक्षक सदस्य रुपये 11,000/- ☐ संरक्षक सदस्य रुपये 5,100/- ☐ विशेष सदस्य रुपये 3,100/- ☐ आजीवन (स्थायी) सदस्यता रुपये 1,500/- ☐ राशि देकर आजीवन सदस्यता स्वीकार करता/ करती हूँ।

मेरा वर्तमान व्यवहारिक का पता :- ....

....

जिला .... प्रदेश ....

पिनकोड .... एस.टी.डी. कोड ....

फोन नम्बर .... मोबाईल ....

ई-मेल .... है।

दिनांक : हस्ताक्षर

कृपया यहाँ से निकालें

कार्यालयीन उपयोग हेतु

श्री/श्रीमति .... पिता श्री .... को शिरोमणी संरक्षक/पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक/परम संरक्षक/पुण्यार्जक संरक्षक/सम्मानीय संरक्षक/संरक्षक/विशेष सदस्य/आजीवन सदस्यता क्रमांक ....प्रदान की जाती है।

दिनांक हस्ता. सम्पादक/प्रबन्ध सम्पादक

आशीर्वाद एवं प्रेरणा : संत शिरोमणी आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज से दीक्षित आचार्यश्री आर्जवसागर जी महाराज

पत्रिका की विशेषताएं एवं उद्देश्य :

- ☞ विशिष्ट साधक आचार्यों या साधुओं के और डाक्ट्रेट व विशिष्ट विद्वानों के शिक्षाप्रद आलेखों, प्रवचनों एवं समीक्षाओं का प्रस्तुतिकरण
- ☞ सत् साहित्य समीक्षा। ☞ अहिंसात्मक जीवन शैली। ☞ व्यसन मुक्ति अभियान।
- ☞ हिंसक पदार्थों व हिंसक सौंदर्य प्रसाधन का निरसन।
- ☞ नई पीढ़ी के लिए वैज्ञानिक शैली में जैन दर्शन का प्रस्तुतिकरण।
- ☞ रूढ़िवाद, मिथ्यात्व व शिथिलाचार रहित अनेकान्त, स्याद्वाद और सापेक्षवाद शैली में जैनत्व का प्रस्तुतिकरण।
- ☞ धार्मिक प्रश्नोत्तरी व काव्य संग्रह की प्रस्तुति।
- ☞ धार्मिक पर्व आयोजन व मुनि संघ समाचार प्रस्तुति इत्यादि। ☞ प्रतिभा सम्पन्न प्रतियोगियों के लिए सम्मानित करना।

नोट : **''भाव विज्ञान'' भोपाल के पक्ष में (ड्राफ्ट अथवा) स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, टी.टी. नगर, भोपाल में नेट/कोर बैंकिंग सुविधा के अंतर्गत सेविंग बैंक एकाउंट नंबर-63016576171 एवं IFS Code SBIN0030005 में नगद राशि सीधे जमा कर प्रकाशक को रसीद की छायाप्रति प्रेषित कर सदस्यता शुल्क की रसीद प्राप्त की जा सकती है।**

सदस्यता आवेदन पत्र भेजन का पता

''भाव विज्ञान'' एम-8/4, गीतांजली काम्पलैक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003 (म.प्र.) को प्रषित करें।
सम्पर्क : डॉ. अजित कुमार जैन - 09425601161, डॉ. सुधीर जैन - 09425011357

कृपया पत्रिका को पढ़कर अपने परिजन को दें या किसी दि. जैन मंदिर, वाचनालय अथवा किसी दि. जैन धर्म क्षेत्र पर विराजमान कर दें।

सिद्धचक्र महामण्डल पर अर्घ चढ़ाकर श्रीफल का पर्वत बनाते हुए भक्तगण।

कण्ठपाठ प्रतियोगिता में प्रदान किये जाने वाले स्वर्णिम प्रतीक चिह्न प्रदर्शित करते हुए।

कण्ठ पाठ प्रतियोगिता में गोल्ड प्रतीक चिह्न प्रदाता श्री मित्तलजी एवं उनके साथी आशीष लेते हुए।

आ.श्री 108 आर्जवसागरजी महाराज की पुरानी पिच्छि ग्रहण करते हुए रवि जैन सपत्नीक, पुरवा।

आ.श्री 108 आर्जवसागरजी महाराज के कर में नवीन पिच्छि भेंट करते हुए राजेश जैन आदि।

पुरवा, जबलपुर में नवीन पिच्छिका प्रदान करते हुए सुरेन्द्र जैन आदि।

आ.श्री से नियम संकल्प पूर्वक संघस्थ पुरानी पिच्छिका ग्रहण करते संजय जैन (फोटो स्टूडियो वाले) पुरवा।

नवीन पिच्छिका प्रदान करते हुए लोकेश जैन, दिल्ली सपरिवार।

रजि. क्रं. MPHIN/2007/27127

संघस्थ पुरानी पिच्छि ग्रहण करते हुए बाहुबली जैन,
दावणगेरे (कर्नाटक)

संघस्थ पुरानी पिच्छि ग्रहण करते हुए संजीव जैन,
खरिया रोड, नवापारा, उड़ीसा।

संगम कॉलोनी में मंचासीन आ.श्री आर्जवसागर जी महाराज
के प्रवचन सुनता जनसमूह।

पनागर में अतिशय क्षेत्र का दर्शन करते हुए ससंघ
आ.श्री. आर्जवसागरजी महाराज।

भाव विज्ञान पत्रिका का विमोचन करते हुए पवन जैन
पारस प्रिंटर्स, भोपाल।

बहोरीबंद में आ.श्री आर्जवसागरजी से आशीष लेते हुए
संजय पाठक लघु, मध्यम उद्योगमंत्री म.प्र. एवं
शशांक श्रीवास्तव, महापौर कटनी।

पुरवा जबलपुर में सिद्धचक्र महामण्डल विधान के
समापन पर श्री जी की शोभा यात्रा एवं रथोत्सव।

अतिशय क्षेत्र बहोरीबंद में श्री शांतिनाथ भगवान की
भक्ति करते हुए आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज।

स्वामी एवं प्रकाशक : श्रीमती सुषमा जैन द्वारा मुद्रक : पवन कुमार जैन द्वारा पारस प्रिन्टर्स, 207/4, सांईबाबा काम्पलेक्स,
जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल से मुद्रित एवं एमआईजी-8/4, गीतांजली काम्पलेक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित।
सम्पादक - डॉ. अजित कुमार जैन, MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003 फोन : 0755-4902433, 9425601161